UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180600

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 82. L 19 S Accession No. H3088

Author [illegible], [illegible]

Title સુંદર - રસ. 1959.

This book should be returned on or before the date last marked below.

ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला—हिन्दी ग्रन्थाङ्क—१००

सुन्दर रस

[तीन अङ्कोंका सुखान्त नाटक]

लक्ष्मीनारायण लाल

180600

भारतीय ज्ञानपीठ • काशी

ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला
सम्पादक और नियामक
श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन

प्रथम संस्करण
१९५९
मूल्य डेढ़ रुपया

प्रकाशक
मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी

मुद्रक
बाबूलाल जैन फागुल्ल
सन्मति मुद्रणालय, वाराणसी

शिक्षार्थी
और
हिरण्मयीको

Scenic truth is not like truth in life; it is peculiar to itself, I understood that on the stage truth is that in which the actor sincerely believes. I understood that even a palpable lie must become a truth in the theatre, so that it may become art. For this, it is necessary for the actor to develop to the highest degree his imagination, a childlike naivete and truthfulness, an artistic sensitivity to truth and to the truthful in his soul and body. All these qualities help him to transform a coarse scenic lie into the most delicate truth of his relation to the life imagined. All these qualities, taken together, I shall call the feeling of truth.

—**Stanislavsky**

[My Life in Art]

'सुन्दर रस'—सर्वप्रथम नाट्यकेन्द्र, इलाहाबाद, द्वारा ४ नवम्बर १९५८ को पैलेस थियेटरमें प्रस्तुत किया गया।

भूमिकामें :

पण्डितराज	जीवनलाल गुप्त
देवि माँ	देशी सेठ
भट्टाचार्य	डॉ० सत्यव्रत सिनहा
शक्तिदेव	रामचन्द्र गुप्त
जैनाथ	शिवाजी मिश्र
बीना	उषा वर्मा
केदार [वकील]	हृदयनारायण टण्डन
सुमिरन	राजेश्वर प्रसाद
अध्यापक	राजकरन सिंह

मंच सजा, आलोक सम्पात, वस्त्र एवं रूप विन्यास—सब नाट्य-केन्द्र द्वारा परिचालित प्रशिक्षण-केन्द्रके सहयोगी सदस्यों (विद्यार्थी वर्ग) द्वारा सम्पन्न हुआ, और इसका निर्देशन स्वयं लेखकने किया।

पात्र

●

पण्डितराज
देवि माँ
शक्तिदेव
जैनाथ
भट्टाचार्य
वकील साहब [केदार]
बीना
सुमिरन
अन्य : बोतलवाला, सब्जी-फलवाला और बाजावाला ।

HUMOR

[मैंने अनुभव किया है कि जैसे व्यक्ति पूर्णतः अपने प्रत्यक्ष रूप और शरीरमें नहीं, अपने कर्मोंके दर्पणमें दिखता है, ठीक उसी भाँति नाटक पाण्डुलिपिमें नहीं, अपने अर्न्तनिहित रंगमंचमें अभिव्यक्त होता है। और तभी इस आत्मिक कसौटीसे पाण्डुलिपिमें छिपे नाटककी निर्बलता और शक्तिका प्रत्यक्ष ज्ञान और अनुभव व्यावहारिक प्रस्तुतीकरणसे प्राप्त होता है। इसी अनुभवसे लाभ उठाते हुए, प्रस्तुतीकरणके उपरान्त मैंने फिरसे 'सुन्दर रस'को लिखा है। इस नव संस्करणमें बहुत कुछ घटाया-बढ़ाया गया है—उदाहरण स्वरूप अब जैसे, अध्यापक-एक चरित्र ही कम हो गया है।

मुझे विश्वास हुआ है, नाटक लिखना, रंगमंच ढूँढ़ना है, और रंगमंच ढूँढ़ना वास्तवमें एक यज्ञ है—जिसमें बहुत बलि देनी होती है, बहुत-सी चीज़ोंकी; सबसे पहले अपने अहं की, फिर····]

पहला अङ्क

[पण्डितराजके घरका बाहरी कमरा। पीछे दरवाज़ा है, जो क़रीब-क़रीब गलीमें खुलता है; और सामने बिलकुल सड़क जैसा रास्ता चलता है। बायीं ओर, भीतर घरमें जानेका रास्ता है।

कमरेमें दायीं ओर एक छोटा-सा आसन लगा है, पण्डितराज जिसपर बैठते हैं; और बायीं ओर शिष्योंके बैठनेके लिए लकड़ीके दो छोटे-छोटे आसन दीख रहे हैं। कमरेमें इसके अतिरिक्त और विशेष कुछ नहीं है, हाँ पीछे दीवारमें पण्डितराजके गुरु महाराजका चित्र अवश्य लगा है।

पीछेका दरवाज़ा खुलता है। पण्डितराजके दो शिष्य—क्रमशः शक्तिदेव और जैनाथ हाथोंमें पुस्तक लिये प्रवेश करते हैं और अपने-अपने आसनपर बैठकर स्वाध्ययनमें लग जाते हैं। घरमें से, कुछ ही क्षणों बाद पण्डितराज पूजाकी मुद्रामें निकलते हैं—अपनी अँजुलिमें पुष्प लिये हुए। शिष्य दौड़कर गुरुका चरण स्पर्श करते हैं। पण्डितराज उन्हें रोककर, पहले अपने गुरुके चित्रपर पुष्प चढ़ाते हैं, फिर शिष्योंका अभिनन्दन स्वीकार करते हैं। और अपने आसनपर बैठने लगते हैं]

पण्डितराज : जैनाथ! तुम्हारी वाणी अच्छी है, संगीत है, पर उसमें विवेककी कमी है। इस दोषके कारण प्रायः लोग अर्ध-विक्षिप्त कहे जाने लगते हैं!

जैनाथ : अर्धविक्षिप्त !····आधे पागल ! नहीं, नहीं गुरुजी, मैं अपना दोष अवश्य सुधार लूँगा । मैं ब्रह्मचारी, विवेकवान बनूँगा ! मैं वीरव्रतधारी पहलवान बनूँगा····।

[घबड़ाकर अपना मुँह पकड़ लेता है। शक्तिदेव प्रसन्न है ।]

पण्डितराज : शक्तिदेव !

शक्तिदेव : हाँ, गुरुजी ! आज्ञा····।

पण्डितराज : तुम्हारा व्याकरण अच्छा है । भाषामें प्रवाह है—पर उसमें संगति नहीं है। संगतिसे मेरा तात्पर्य बोलने और लिखनेकी शैली । शैलीसे मेरा आशय है, शुद्ध व्यवहार और विवेक-मय जीवन—नीर-क्षीर विवेक ।

शक्तिदेव : आज्ञा शिरोधार्य है गुरुजी ।

पण्डितराज : जिस भाँति विनय विद्याका भूषण है, उसी भाँति विवेक एवं बुद्धि मानव-व्यक्तित्वके लिए अमूल्य है । परन्तु समाज-में देखा यह जाता है कि जो सुन्दर है, वह बुद्धि और कर्मसे असुन्दर है, और जो असुन्दर है, वह···।

[जैनाथ बीच हीमें प्रायः बोलता है ।]

जैनाथ : गुरु जी ! शरीरसे असुन्दर न !

पण्डितराज : सावधान ! सदाचार सीखो ! गुरु और माता-पिताकी शिक्षाके बीच कभी नहीं बोलना चाहिए ।

जैनाथ : क्षमा गुरुजी !

पण्डितराज : इसीलिए वर्षोंकी साधना, तपश्चर्या एवं अनुसंधानसे जिस अमूल्य सुन्दर रसका मैंने निर्माण किया है, उससे कोई भी असुन्दर सुन्दर हो सकता है ।

शक्तिदेव : और जिसके पास बुद्धि नहीं है वह !

पण्डितराज : बताया न ! विवेक एवं बुद्धि रहित सुन्दरता अपूर्ण है।

[साभिप्राय पहले भीतरकी ओर, फिर शिष्योंको देखते हुए]

तुम्हारी देवि माँको मैंने इसी सुन्दर रससे इतना अपूर्व सौन्दर्य दिया है। पर ईश्वर मेरी परीक्षा ले रहा है····।

[दोनों शिष्य आपसमें आँख बचाकर देखते रहते हैं।]

मेरी पत्नी—अर्थात् तुम्हारी देवि माँ मुझे पूर्णतः विवेक-हीन मिली थीं।

दोनों शिष्य : पूर्ण पागल गुरुजी ?

पण्डितराज : हाँ ···देवि माँके पिता एक बहुत प्रतिष्ठित महाविद्यालयके प्रधानाचार्य हैं। देवि माँ हाई स्कूलकी परीक्षा उत्तीर्ण हैं। इनकी एक छोटी बहन है, बीना, अब वह विश्वविद्यालयमें पढ़ती होगी—बड़ी विवेकवती है वह—सुन्दर एवं सुशील।

शक्तिदेव : बहुत सुन्दर हैं वह गुरुजी ?

पांण्डत : हाँ ··।

जैनाथ : क्या अवस्था होगी उनकी गुरुजी ?

[पण्डितराज घूरकर देखते हैं : जैनाथका ध्यान अपनी पोथीकी ओर है।]

पण्डितराज : विषयान्तर बहुत बड़ा दोष है विद्यार्थियोंके लिए। तुम्हें इसका सदा ध्यान रखना होगा कि तुम मेरे शिष्य हो। मैं विद्या, सदाचार, चरित्र और सुन्दरता—सबका विद्यार्थी-में समन्वय करके चलता हूँ।

शक्तिदेव : विषयान्तर तो नहीं हो रहा है गुरुजी ?

जैनाथ : तो गुरुजी, देवि माँ पहले पूर्ण पागल थीं ?

[पण्डितराज अपने आपमें कुछ गुनते हुए भीतरके दरवाज़ेसे झाँककर जैसे देविमाँको देखते हैं, और तब पुनः आसनपर बैठते हैं ।]

पण्डितराज : हाँ, परन्तु मैं अपनी ओषधियों एवं उपचारोंसे देविको इतना स्वस्थ कर सका, और मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह बहुत शीघ्र ही पूर्ण स्वथ्य हो जायँगी । मैं इसके लिए ओषधि-प्रयोग, तपश्चर्या और अनुसंधान भी कर रहा हूँ ।

[पीछे गलीसे रद्दी अखबार और बोतल ख़रीदनेवाला एक आदमी गुज़रता है, सहसा भीतरसे दौड़ती हुई देवि माँका प्रवेश । हँसती हुई गलीकी ओर बढ़ती हैं ।]

देवि माँ : ओ काराज़ बोतलवाले, धत् तेरेकी, आजा···आजा ! यहाँ आजा···अरे, आता क्यों नहीं रे ? मेरे पास बहुत सी ख़ाली बोतलें हैं !

पण्डितराज : [उठकर बोतलवालेको भाग जानेको संकेत करते हैं] देवि ! देवि, यहाँ आ जाओ, उधर मत कष्ट करो ! [पुकारते हुए] सुमिरन ओ सुमिरन !

[सुमिरन भीतरसे दौड़ता हुआ आता है । पर देवि माँ सुमिरनको तत्काल आज्ञा देती हैं ।]

देवि माँ : जा, भीतरसे सब बोतलें उठा ला । मेला देखने चलेंगे । [मुँहपर हाथ लगाकर मुँह बजा देती हैं] जा···जा··· जा···अच्छा !

पण्डितराज : सुमिरन, यह सब क्या है ?

देवि माँ : ये सब बोतलें हैं, बोतलें । बोतल वाले कहाँ जा रहा है ? किस हिसाबसे बोतल लेगा ?

बोतलवाला : [बाहरसे] दो आने बोतल !

पण्डितराज : तुम अपने रास्ते जाओ। चले जाओ! तुम लोगोंसे कितनी बार कहा है कि···।

[बोतलवाला चला जाता है]

सुमिरन : माँ जी अन्दर चलिए।

देवि माँ : [बिगड़ती हुई] धत् तेरेकी, तुम सब लोग अन्दर जाओ।

पण्डितराज : [शिष्योंसे] तुम लोग बुद्धि एवं विवेक द्वारा देवि माँको अन्दर ले जाओ। सावधान, यही तुम्हारी परीक्षा है।

जैनाथ : [आगे बढ़] देवि माँ ··देवि माँ···कृपया भीतर चलिए।

शक्तिदेव : [आगे आकर] गुरुजीकी आज्ञा है, माँजी शीघ्र भीतर चलिए। हम लोग·····

सुमिरन : आइए माँजी, क्या लेना है···? मुझे बताइए, हाँ,···हाँ बताइए।

देवि माँ : धत् तेरेकी [हँसती हैं] शिष्यगण! ध्यानपूर्वक सुनो, तुम लोग किञ्चित् पागल! और तुम्हारे आचार्य पूर्ण पागल!

सुमिरन : [घबड़ाकर] माँजी, वह देखिए। बाजा वाला आगया। इधर आइए! आइए!

देवि माँ : धत् तेरेकी!

सुमिरन : [मनाता हुआ] नहीं माँजी, वह देखिए आगया। [गलीकी ओर बढ़कर] ओ बाजे वाले···इधर आओ। [देविसे] इधर आइए माँजी, आइए, बाजावाला [भीतर मुड़ता हुआ] भीतरसे आ रहा है! ओ बाजे-वाले! जल्दी-जल्दी चलिए माँजी।

देवि माँ : [जाते जाते] धत् तेरेकी।

[माँके संग सुमिरनका भीतर प्रस्थान]

पण्डितराज : [शिष्योंसे] देखा, तुम सब असफल रहे। इसे कहते हैं बुद्धि और विवेक। इसमें व्याकरण और संगतिके दोष अवश्य थे, पर इसमें विवेककी वह शक्ति थी, जो देवि माँको अन्दर खींच ले गई।

जैनाथ : [हाथ उठाकर] इस विवेकमें छल और झूठके भी तो अनेक तत्त्व थे। क्या यह सब ग्राह्य हैं गुरुजी ?

पण्डितराज : न्यायशास्त्रमें, प्रयोजनको अत्यधिक महत्त्व दिया गया है। उचित प्रयोजनकी सिद्धिके लिए झूठ-सचका विचार नहीं किया जाता।

शक्तिदेव : सच गुरुजी, मैं इसका सदा ध्यान रक्खूँगा।

जैनाथ : और साधनका विचार गुरुजी ?

शक्तिदेव : बुद्धिका विचार गुरुजी ?

जैनाथ : विवेकका विचार गुरुजी ?

पण्डितराज : जिसका लक्ष्य सुन्दर है, सुन्दर बननेकी ओर है, उसके लिए सब उचित है। [रुककर] इस असुन्दर संसारको हमें सुन्दर बनाना है, इसे वास्तविक सुख एवं आनन्द देना है।

[दोनों शिष्य मुदित होते हैं]

पण्डितराज : इसीलिए समस्त शास्त्रोंमें मैंने आयुर्वेदको बहुत ऊँचा पाया। आयुर्वेदाचार्य होनेके उपरान्त, हिमालयमें रहकर रसायनिक ओषधियोंपर मैंने खोज कार्य किया, फिर बड़ी साधना, तपस्या एवं ईश्वर कृपाके फलस्वरूप मैं इस अद्‌भुत रसको जान सका। मैं इस रसको निःशुल्क बाँट देता, परन्तु जीवनका प्रत्यक्षवाद, मुझे विवश किये हुए है।

शक्तिदेव : धन्य हैं आचार्यजी आप !

जैनाथ : तभी तो समाज आपको इतनी श्रद्धा देता है महाराज !

पण्डितराज : श्रद्धा, एक काल्पनिक असत्य ! यदि समाजसे मुझे श्रद्धा मिली होती, तो 'सुन्दर रस'के साथ ही मैं एक और रसका निर्माण कर चुका होता। देवि माँ पूर्ण स्वस्थ हो गई होतीं अबतक ! [**रुककर**] जो ख्याति एवं सम्मान मेरे सुन्दर रसको मिलना चाहिए था, वह मुझे नहीं प्राप्त हो रहा है। नहीं तो मैं ऐसे निवासस्थानमें कदापि नहीं रहता।

शक्तिदेव : वह नया रस किस रोगके लिए होगा गुरुजी ?

पण्डितराज : क्या बताऊँ !

जैनाथ : हाँ गुरुजी ! आप कृपा कर हमें अवश्य बताइए।

पण्डितराज : वह विवेक एवं ज्ञानकी महान् ओषधि होगी। 'विवेक रस' उसका नाम होगा।

[**इसी बीच पीछेके दरवाज़ेपर फल वाला पुकारता है।**]

फलवाला : [**आवाज़**] हरे ताजे मीठे फल, अंगूर चमन वाले !

पण्डितराज : शक्तिदेव, विवेकसे हटाओ इसे, नहीं पुनः देवि माँ·····।

शक्तिदेव : [**बढ़कर क्रोधसे**] चले जाओ, बको मत। [**जैसे पकड़ने दौड़ता है।**] भागता है कि नहीं !, भाग गया गुरुजी, नहीं तो मैं सारा बदला चुका लेता।

पण्डितराज : फिर वही बात शक्तिदेव, तुम्हारा व्याकरण ठीक है। भाषामें प्रवाह भी है, परन्तु, संगति नहीं है। भाव और कर्मकी असंगति, किञ्चित् पागलके लक्षण यही हैं। [**रुककर**] जाओ, बुलाओ फलवालेको, सावधान, विवेक एवं संगतिका ध्यान रखना।

शक्तिदेव : [**दरवाज़ेपर जाकर**] प्रिय फलवाले ! ओ फलवाले ! अरे सुनो प्रिय फलवाले !

पण्डितराज : [**अप्रसन्न**] मैं देखता हूँ कि तू संगतिके नामपर व्याकरण धर्म, प्रवाह एवं सदाचार, सबका गला घोंट देगा। चलो इधर ! जैनाथ, तुम फलवालेको पुकारो ! ठाकुरजीके भोगके लिए अंगूर लेना है।

जैनाथ : [**दरवाज़ेपर जाकर**] चले फलवाले, ओ फलवाले, ओ फल वाले, गुरुजी बुला रहे।

पण्डितराज : व्याकरणके अनन्त दोष देखो। फल वाला एक है, एक वचन। और चले बहुवचन ! गुरुजी बुला रहे, कि···· बुला रहे हैं ? क्या अध्ययन करोगे तुम लोग ? सदाचार एवं विनय तकका ध्यान नहीं।

[**फलवाला दरवाज़ेपर आता है।**]

पण्डितराज : विचार करो तुम लोग। अपनी-अपनी त्रुटियाँ देखो [**दरवाज़ेपर जाकर अंगूर ख़रीदते हैं, फलवाला चला जाता है, पण्डितजी घरमें जाते-जाते**] विचार करो, विचार, फलकी ओर मत देखो। गीतामें श्रीकृष्ण भगवान्‌ने क्या कहा है, भूल जाते हो ? चलो याद करो। 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन'।

[**कहते हुए पण्डितजी अन्दर चले जाते हैं। दोनों शिष्य एक दूसरेका मुँह देखते हैं।**]

जैनाथ : [**याद करते हुए**] फलवाला एकवचन, चले बहुवचन। आगे चले बहुरि रघुराई—रघुराई, एकवचन, चले···· चले···चले बहुवचन। नहीं, कभी नहीं, गोस्वामी तलसीदास····चले····चले···।

शक्तिदेव : चुप रहो, चले····चले ! चले चले क्या ? [नक़ल करता हुआ] ऐसे बोलो, अंगूर चमन वाले । चमन वाला अंगूर····!

जैनाथ : चुप रहो, एक बार वाला, दूसरी बार वाले, इतना व्याकरण दोष !

शक्तिदेव : व्याकरण रखो भोजनालय में । अपनी तो दृष्टि है 'सुन्दर रस' पर । किसी तरह एक ख़ुराक मिल जाय, बस !

जैनाथ : चुप···चुप···किसीने सुन लिया तो ?

शक्तिदेव : भाई, हमें तो देवि माँसे ही भरोसा है, बड़ी सीधी और नेक हैं ।

जैनाथ : बुद्धू कहो बुद्धू । किञ्चित् पागल [रुककर] जल्दीसे माँग लो देवि माँसे, नहीं तो गुरुजी उन्हें बहुत शीघ्र ही पूर्ण स्वस्थ कर लेंगे ।

शक्तिदेव : चुप, "गुरु पत्नीकी निन्दा करहीं । सात जनम तक नर्कहि परहीं" ।

जैनाथ : आचार्यजी आ रहे हैं ! [पढ़ने लगते हैं ।] चला एक वचन, चले बहुवचन···।

शक्तिदेव : 'आगे चले बहुरि रघुराई'···। चले एकवचन,····चले ···चले····नहीं-नहीं बहुवचन ।

[भीतरसे पण्डितराजका प्रवेश]

पण्डितराज : खड़े क्या हो, आसन ग्रहण करो ।

[सब आसन ग्रहण करते हैं]

पण्डितराज : एक बातका सदा ध्यान रखा करो—शास्त्र कहता है कि देशकाल परिस्थितिके अनुकूल चलो । मेरा यह घर बिल-कुल सड़कपर है । इधर सड़क, अर्थात्···राजमार्ग, और

इधर गली, न सड़कमें सुन्दरता है न गलीमें। इसीलिए मैंने यहाँ सुन्दर रसका निर्माण किया है। मेरी कामना है कि समस्त संसार, मानव प्राणी सुन्दर हो जाय। मैं कहीं कुछ भी असुन्दर नहीं देखना चाहता। परन्तु क्या किया जाय, यहाँ रहते मुझे तेरह वर्ष हो गये, मैं कभी ऐसे स्थानमें नहीं रहा। दस वर्ष, गुरुकुलमें रहा, हिमगिरिके अञ्चलमें, बचपन मेरा वनस्थली आश्रममें बीता, जहाँ मैंने क्रमशः योगाभ्यास, व्याकरण, आयुर्वेद एवं न्याय-शास्त्रका अध्ययन किया, मैंने स्वप्नमें भी नहीं सोचा था कि मुझे ऐसे नगरमें रहना होगा। ऐसी गली, और सड़कके बीच। पर मैं प्रसन्न हूँ, ज्ञानसागरमें विचरनेवाले प्राणीको क्या कष्ट **सर्वभूतेषु चात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि।**

[गलीसे आवाज़ आती है, साग सब्जीवाला, आलू, टमाटर, मूली, गाजर! दोनों शिष्य गुरुजीका मुँह देखते हैं।]

पण्डितराज : शक्तिदेव, जाओ तुम दरवाज़ा बन्द कर लो।

[शक्तिदेव दरवाज़ा बन्द करने जाता है, उसी समय भीतरसे देवि माँ दौड़ती हुई आकर उसे रोक देती हैं।]

देवि माँ : [दौड़ती हुई आकर] हे···हे···हे···! धत् तेरेकी! दरवाज़ा क्यों बन्द करते हो? चलो पढ़ो···क···माने कौआ, ख···माने खरगोश, ग····माने गधा! चलो याद करो!

सब्जीवाला : माँजी क्या लेना है?

देवि माँ : धत् तेरेकी, सब लेना है!

[बढ़कर साग-सब्जी लेने लगती हैं।]

पण्डितराज : सुमिरन ! ओ सुमिरन, क्या करते रहते हो तुम अन्दर ? देखो इनकी दशा, सम्हालकर इन्हें भीतर ले जाओ !

[सुमिरन दौड़ता हुआ आता है]

[देवि माँ बढ़कर सब्ज़ी वालेसे एक मूली ले लेती हैं, और दिखाती हैं ।]

देवि माँ : मूली है मूली ! लैलाकी उँगुली ।

सुमिरन : ओ सब्ज़ी वाले ! बस···बस···बस···चला जा यहाँसे ।

[देवि माँ द्वारा ली हुई सब्ज़ी बटोरता है ।]

देवि माँ : आलू भाँटा सेम ! हम साहब तुम मेम !

पण्डितराज : हाँ हाँ ! हम मेम तुम साहब ! अब घरमें जाओ, घरमें ! सुमिरन ! साग-भाजी अन्दर रख कर शीघ्र आओ ।

[सब्ज़ीवाला चला जाता है । सुमिरन सब्ज़ी बटोर कर घरमें चला जाता है । देवि माँ सामने ही बैठ जाती हैं ।]

पण्डितराज : उठो···उठो यहाँसे ।

देवि माँ : धत् तेरेकी ! मैं भी पढ़ूँगी !

पण्डितराज : उठो देवि ! यह तुम्हारे बैठनेका स्थान नहीं । यह तुम्हें शोभा नहीं देता ! उठो देवि !

[देवि माँ हँसती हुई उठती हैं ।]

देवि माँ : मैं सुन्दर हूँ इसलिए ! देखो, मैं कितनी सुन्दर हूँ । मेरे जैसा संसारमें और कोई भी सुन्दर नहीं । अब मैं और सुन्दर लग रही हूँ न ! मैं कितनी सुन्दर हूँ । धत्तेरेकी !

पण्डितराज : देवि ऐसे न खड़ी रहो। जाओ भीतर चलो।

[सुमिरन हाथमें बाजा लिये आता है।]

देवि माँ : शिष्य लोग।

दोनों शिष्य : हाँ, माँजी !····आज्ञा।

देवि माँ : ख़बरदार। दरवाज़ा मत बन्द करना।

दोनों शिष्य : आज्ञा शिरोधार्य है माँजी।

[देवि माँ सामने बढ़ने लगती हैं। सुमिरन बाजा बजाता हुआ उन्हें रोकता है।]

सुमिरन : इधर सड़क है माँजी। उधर नहीं। लीजिए यह बाजा है आपका।

देवि माँ : वह देखो। वह देखो वह। रिक्शेपर बैठे हुए वकील साहब जा रहे हैं केदार बाबू एम. ए. एल-एल. बी.। आचार्य जी···।

पण्डितराज : हाँ देवि।

देवि माँ : वकील साहब एक ख़ुराक सुन्दर रस पी गये हैं न! तभी, बहुत अकड़ कर रोबमें रिक्शेपर बैठे हुए हैं। मेरे जैसा संसारमें और कोई सुन्दर नहीं।

[उसी अकड़ी हुई मुद्रामें खड़ी हो जाती हैं। सुमिरन बाजा बजाता हुआ तथा एक हाथसे देवि माँको पकड़े हुए अन्दर ले जाता है। कुछ ही क्षणों बाद गलीसे किसीकी आवाज़ आती है।]

आवाज़ : आयुर्वेदाचार्य जी! पण्डितराज आयुर्वेदाचार्यका मकान यही है?

पण्डितराज : शक्तिदेव ! देखो कौन पुकार रहा है ?

[शक्तिदेव गर्लाके दरवाज़ेपर जाता है ।]

शक्तिदेव : कौन हैं आप ?

उत्तर : के० सी० भट्टाचार्य !

[शक्तिदेव लौटकर पण्डितराजको बताता है ।]

शक्तिदेव : गुरुजो, कोई के० सी० भट्टाचार्यजी पधारे हैं !

भट्टाचार्य : ओ बन्धु ! तुम्हारा खोखा है खोखा ! जो गुरुकुलमें ... छिपकर माच्छ भात खाता था ।

[भट्टाचार्यको देखते ही पण्डितराज गलेसे मिलनेके लिए दौड़ते हैं ।]

पण्डितराज : ओहो हो ! के० सी० भट्टाचार्य ! स्वागत ! स्वागत ! मेरे अहोभाग्य ! अहोभाग्य !

[प्रसन्नमुख, अतिथि बन्धुका शिष्योंसे परिचय कराते हुए]

यह मेरे गुरुभाई हैं, जिन्हें गुरुकुलमें हम लोग खोखा पण्डित कहा करते थे ।

[दोनों शिष्य चरणस्पर्श करते हैं ।]

भट्टाचार्य : इन्हें बोताय दो पंडितराज ! जहाँ तुमने आयुर्वेद लिया था, मैं वहाँ केवल साहित्यका विद्यार्थी था । तुमी आयुर्वेदाचार्य तो आमि साहित्याचार्य ! [भावनामें आ जाते हैं ।]

[दोनों शिष्य आश्चर्यचकित देखते रहते हैं]

पण्डितराज : उन स्वर्गिक क्षणोंकी सुधि दिलाने तुम कहाँसे आ गये मित्र ! [शिष्योंसे] अब जाओ तुम लोग ! अब तुम लोगोंको अवकाश है ।

[दोनों शिष्य बाहर जाने लगते हैं । पण्डितराज मित्रके समीप बढ़ते हैं ।]

कहो प्रियवर ! तुमने आज सच बड़ी कृपा की ! मेरा जीवन तो बिलकुल बदल गया । कहाँ वह आनन्दमय जीवन कहाँ यह···। घर ढूँढ़नेमें, बन्धु, कोई कष्ट तो नहीं हुआ ! कहाँ हो आजकल ? कभी पत्र भी न दिया !

भट्टाचार्य : अरे बाबा, राम राम कहो ! हम तो इस बातके लिए डरता था कि तुम मुझे पोहिचान शकोगे या नहीं ! भाई, इतना नाम है तुम्हारा, मुझे घर ढूँढ़नेमें क्या कष्ट होता !

पण्डितराज : मुझे लज्जित न करो बन्धु ! तुम मेरे गुरुभाई हो । आओ यहाँ विराजो । नहीं-नहीं, इस आसनपर ।

[पण्डितराज भट्टाचार्यको सादर अपने आसनपर बैठाते हैं ।]

भट्टाचार्य : अरे बाबा ! मेरा भाग्य कहो ! दस वर्ष बाद यह भेंट हुई है । कितने बाल-बच्चे हैं—पहले यह बताओ ! आपने तो आठ हैं, अशत्य क्यों बोलूँ !

पण्डितराज : सब ईश्वरकी कृपा है भट्टाचार्य ! अपने तो कोई बालबच्चा नहीं है ! सब ठीक है ! सब आनन्द है !

भट्टाचार्य : अरे ! यह क्या बात है ? कोई गोलमाल तो नहीं !

[उठकर पण्डितराजकी नाड़ी देखना चाहते हैं । पण्डितराज लोकलाजके डरसे दायें-बायें झाँकने लगते हैं ।]

डरो नहीं, हाँ हाँ कोई नहीं देखेगा ! अरे भाई, साहित्यसे भी तो नाड़ी देखा जाता है। कालिदास क्या था! 'अपि गावारोदित्यपि च विदलेत् वज्रहृदयम्!' ओ बाबा···अशत्य कह गया। भवभूतिका सूक्त है ! अपना भी सब गोलमाल हो गया पण्डितराज !

पण्डितराज : बन्धु ! थोड़ा धीरे-धीरे बोलो ! कारण यह है कि···।

भट्टाचार्य : कोई कारण हो बाबा ! अपने से तो धीरे नहीं बोला जाता ! पण्डितराज ! तुमसे मिलकर हृदय भावुक हो गया है।

पण्डितराज : हाँ हाँ ! मैंने यूँ ही कहा था बन्धुवर !

भट्टाचार्य : अच्छा, अब नाड़ी देखूँ तुम्हारी ! भाई इसमें लज्जाकी क्या बात !

पण्डितराज : जरा धीरे बोलो बंधु ! तुम्हें कष्ट हो रहा होगा !

भट्टाचार्य : अरे जब धीरे स्त्री लोग नहीं बोलता, तो पुरुष होकर हम क्यों···[नाड़ी देखते हैं।] नाड़ी तो ठीक चल रही है तुम्हारी बहुत उत्तम !

पण्डितराज : परन्तु नारी···।

[सहसा भीतरसे देवि माँ प्रविष्ट होती हैं--चुपचाप, फिर हँसती हुई। उन्हें देखते ही भट्टाचार्य बेतरह घबड़ा जाते हैं।]

भट्टाचार्य : ओ माँ···ओ माँ ! [**पण्डितराजके पास भागते हैं।**] पण्डितराज ! पण्डितराज !

पण्डितराज : घबड़ाओ नहीं बन्धु ! यह मेरी धर्मपत्नी हैं। देवि, यह मेरे गुरुभाई श्री के० सी० भट्टाचार्य हैं। यह सौन्दर्य पारखी हैं—साहित्याचार्य हैं यह देवि !

भट्टाचार्य : नेई नेई···माँ ! हम बैंकमें कलर्क हैं···कलर्क !

देवि माँ : [सहसा फूटकर हँसती है] धत् तेरेकी !

भट्टाचार्य : [विनयसे] नमस्कार भाभीजी,

[उत्तरमें देवि माँ भट्टाचार्यके बिलकुल पास चली जाती हैं। भट्टाचार्य घबड़ा जाते हैं।]

भट्टाचार्य : नेइं नेइं ! तुमी आमार माँ ! ओ माँ ! [झुककर चरण-स्पर्श करना चाहते हैं] ओ माँ !

देवि माँ : धत् तेरेकी।

पण्डितराज : भट्टाचार्य ! तुम देविको भाभी कहो न भाभी ! माँ क्यों कहने लगे ?

भट्टाचार्य : [डरे हुए] हम सबको माँ बोलता है, ओ माँ ऐसे न देखो, माँ मुझे। मैं आपका शिशु हूँ, शिशु।

[सुमिरन घबड़ाया हुआ आता है।]

देवि माँ : आप क्या खाते हैं ? धत् तेरेकी !

भट्टाचार्य : कुछ नहीं माँ, कुछ नहीं।

पण्डितराज : सुमिरन ! कुशल नहीं।

भट्टाचार्य : हमारा ? ओ माँ, नेइं। नेइं।

सुमिरन : माँ जी अन्दर चलिए। बोतलवाला आया है घरमें ! चलिए। फिर अभी आ जाइएगा !

देवि माँ : आप गुरु भाई हैं ?

भट्टाचार्य : नहीं माँ, हाँ····हाँ ! नहीं नहीं, हाँ···हाँ····हाँ !

सुमिरन : मेरे संग आइए माँ जी ! चलिए मेला देखने चलेंगे !

देवि माँ : मेरी नाड़ी देखो ! धत् तेरेकी ! देखो मेरी नाड़ी।

[भट्टाचार्य भयभीत नाड़ी देखते हैं।]

भट्टाचार्य : शब ठीक है माँ जी, शब ठीक है।

पण्डितराज : सुमिरन ! क्या खड़ा-खड़ा मुख देख रहा है ?

[सुमिरन भीतर भागता है और एक मुँहका बाजा लाकर देवि माँको देता है ।]

सुमिरन : अन्दर चलिए माँ जी, बाजा वाला अन्दर बैठा है। बहुत बाजा हैं उसके पास।

[देवि माँ साँस फूँककर सहसा बाजा बजा देती हैं, और गलीके दरवाज़ेकी ओर बढ़ती हैं]

सुमिरन : अन्दर,···अन्दर···माँजी ! इधरसे !

[देवि माँ खड़ी बाजा बजाती हैं, सुमिरन उन्हें अन्दर ले जानेके लिए हाथ जोड़ रहा है ।]

देवि माँ : [सहसा बाजा रखकर स्त्री-सुलभ ढंगसे सिर ढँकते हुए] नमस्ते बैठिए !

[पण्डितजी आँख मूँदे हाथ जोड़े ईश्वरकी वन्दना करने लगते हैं ।]

पण्डितराज : [प्रसन्नतासे] देवि, यह मेरे अनन्य मित्र हैं, श्री के० सी० भट्टाचार्य !

देवि माँ : नमस्ते ! सुमिरन जलपान लाओ ! चलो अन्दर, क्षमा कीजिएगा···मैं अभी आई !

[सुमिरनके साथ देवि माँका अन्दर प्रस्थान, भट्टाचार्य और भी हतप्रभ हो जाते हैं ।]

पण्डितराज : ईश्वर सब कुशल करते हैं ।

भट्टाचार्य : अरे बाबा ! पंखा लाओ पंखा ! अउर एक लोटा शीतल जल ! लाओ, लाओ ओ माँ ! ओ माँ !

[पण्डितराज स्वयं दौड़कर भीतरसे पानी लाते हैं ।]

पण्डितराज : बन्धु, ओ मित्र ! जल खाओ जल । मुँह खोलो ।
[पानी पीकर भट्टाचार्य कुछ स्वस्थ होते हैं ।]

भट्टाचार्य : यह क्या है पण्डितराज ? तुमने मुझे आते ही क्यों नेई बता दिया । [रुककर] अब समझा, अब समझा, तुम्हारा दोष नहीं ! तुम तभी धीरे-धीरे बोलनेके लिए मुझसे कह रहे थे ।

पण्डितराज : मित्र देख लो मेरा जीवन ! मेरी स्त्रीका मस्तिष्क किञ्चित्···। पर अब तो ठीक है, ठीक हो जायगा ।

भट्टाचार्य : हाँ···हाँ···हाँ ! समझ गया···नाम न लो बाबा, सब समझ गया !

पण्डितराज : पूर्ण पागल थीं मेरी धर्मपत्नी ! मैंने अपनी ओषधियों एवं उपचारोंसे इन्हें स्वस्थ किया । वर्षोंकी तपस्या और सन्तोषसे इन्हें ठीक कर पा रहा हूँ । अब तो मस्तिष्क-विकार किञ्चित् ही रह गया है । कभी-कभी मस्तिष्क-विकारका दौड़ा पड़ जाता है, शेष शुभ हो चुका है ।

भट्टाचार्य : क्या बकते हो तुम पण्डितराज ? देवि माँ अभी·····।

पण्डितराज : हाँ-हाँ, अभी बाजा बजाते-बजाते, मस्तिष्क बिलकुल ठीक हो गया था !

भट्टाचार्य : हो गया था नहीं, हो गया है !

पण्डितराज : आशा है अब मेरी देवि शीघ्र ही पूर्ण स्वस्थ हो जायँगी । यह सुधार अभी गत सप्ताहसे होने लगा है !

भट्टाचार्य : ओ माँ ? ईश्वर करे यह अब पूर्ण स्वस्थ हो जायँ । यह हुआ कबसे पण्डितराज ?

पण्डितराज : मेरे गृहस्थ-आश्रममें प्रवेश करते ही ।

भट्टाचार्य : ओ बाबा, विवाहके समय देवि माँ ठीक थीं ?

पण्डितराज : मुझे ज्ञात नहीं ! लोग कहते हैं तब यह ठीक थी । बन्धुवर,

मेरा विवाह बचपन ही में हो गया था—जब मैं सात वर्षका था। उसके उपरान्त पिताजीने मुझे गुरुकुलमें प्रवेश करा दिया, और गुरुकुलके उपरान्त जैसा कि आपको ज्ञात ही है!

भट्टाचार्य : [बीच ही में] नहीं बाबा, हमको कुछ पता नहीं, न बाबा! हम कुछ नेईं जानता!

पण्डितराज : हाँ गुरुकुलके पश्चात् मैं आश्रममें चला आया, व्याकरण, न्याय एवं आयुर्वेदमें आचार्य पद प्राप्त करनेके उपरान्त जब मैं गृहस्थ आश्रममें आया, तो मुझे यह मेरी धर्मपत्नी मिलीं। तभीसे मैं अपने सम्पूर्ण तन मन-धनसे इन्हींके उपचारमें लगा हूँ। ईश्वरने मुझे सफलता दी।

भट्टाचार्य : सुनो, सुनो, सुनो, बहुत तेज मत बोलो, हमको थोड़ा समझने दो। गृहस्थ आश्रममें आते-आते देवि माँ पूर्ण पागल? तुमने अपनी ओषधियोंसे इतना स्वस्थ किया?

पण्डितराज : हाँ, देवि दशम कक्षा तक अंग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त कर चुकी थीं जब मैं समस्त विद्या प्राप्त कर गृहस्थ आश्रममें प्रविष्ट हुआ। और तभीसे इन्हें मस्तिष्क-विकार हुआ।

भट्टाचार्य : आच्छा, आच्छा बाबा, अब समझा, पाणिग्रहणके समय यह बिलकुल स्वस्थ थीं। [रुक कर] और सुनो बाबा, तुमने सुन्दर होनेकी भी कोई ओषधि खोज निकाली है?

पण्डितराज : हाँ अवश्य! मैंने 'सुन्दर रस, एक 'अमूल्य रस' का निर्माण किया है।

भट्टाचार्य : कितना लोगको सुन्दर बनाया है?

पण्डितराज : प्रथम अपनी पत्नीको ही मुझे सौन्दर्य देना पड़ा, क्योंकि मैं इनका प्रथम दर्शन करके किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया।

भट्टाचार्य : [बीच ही में] सुनो सुनो, बाबा रुको····आश्रम वाली भाषा मुझसे नेहीं चलेगी। पहिले हमारा बात सुनो, हम ओ सब लाइन छोड़ दिया है। पहिले हम अध्यापक बना, किन्तु ओ काममें हमारा माथा नेही लगा। फिर वैद्य बना, परन्तु वैद्यकीमें एकको उल्टा भस्म दे दिया, राम नाम सत्य हो गया उसका। तबसे हम एक बैंकमें क्लर्क बाबू है। हमको बहुत अच्छा है, काज करता है और सोता भी है। [रुककर] हाँ तो सुनो,देवि माँको अपनी दवासे तुमने इतना सुन्दर बनाया है ?

पण्डितराज : हाँ, पहला प्रयोग मैंने इन्हींपर किया। साँवला रंग था, मुँहपर चेचकके दाग थे, बड़ा सा मुख, उसमें छोटी सी नासिका और छोटी छोटी सी आँखें ! मोटे होठ, बड़े बड़े दाँत, सदा मुख खुला हुआ।

भट्टाचार्य : [आश्चर्यचकित] अरे बाबा, वैसेसे ऐसा हो गया। धन्य है तू ! [दौड़कर चरण छूना चाहते हैं, पण्डितराज भागते हैं।] खोखा चरण स्पर्श करेगा। हम मान गया, धन्य है तूमरा आयुर्वेद ! धन्य तूमरा साधना।

[इसी बीच भीतरसे देवि माँ आकर खड़ी हो जाती हैं, और दोनों मित्रोंकी गति देखकर मुसकराती हैं।]

भट्टाचार्य : [देवि माँको देखते ही सब कुछ भूल जाते हैं] देवि माँ···!

पण्डितराज : तुम भाभी कहो न बन्धु। अब कोई डर नहीं है।

भट्टाचार्य : नहीं-नहीं बाबा, सियाराम-सियाराम ! [एकाग्र दृष्टिसे देविको मन्त्र-मुग्ध होकर देखते रहते हैं।] देवि माँ, आपका चरणस्पर्श करूँगा। आप जैसा भाग्यवान् हम नेहीं

देखा। आपका पति साक्षात् भगवान् है। आपनी प्रकृति तो ओई पुरुष !

[देवि माँ लजाकर भीतर भाग जाती हैं।]

भट्टाचार्य : तूमरा माफ़िक सत्य पुरुष हम नेहीं देखा। तुमने पुरुष जातिकी नाक रखा, अन्यथा न्याय, व्याकरण और आयुर्वेदाचार्य होनेके उपरान्त पागल और असुन्दर पत्नीको कौन स्वीकार करता ? धन्य है तू !

पण्डितराज : सब ईश्वरकी कृपा समझो भट्टाचार्य !

भट्टाचार्य : [आँख मूँदकर] देवि माँ, देवि माँ ! सुन्दर बननेकी दवा, इस अभूतपूर्व रस-अन्वेषणकी प्रेरणा तुमने दिया। देवि माँ तूमि धन्य ! तूमि धन्य !

[हाथ जोड़े तथा आँख मूँदे आसनपर बैठ जाते हैं, और क्षणोंमें ही जैसे सो जाते हैं, भीतरसे सुमिरन जलपान लिये आता है, संगमें देवि माँ भी आती हैं।]

देवि माँ : कृपया जलपान कर लीजिए ! इन्हें जगाइए न !

पण्डितराज : भट्टाचार्य, बन्धु भट्टाचार्य ! देवि तुम्हारे लिए जलपान ले आई है।

भट्टाचार्य : छेड़ो नहीं, हम चिन्ता कर रहा है—गृहस्थ-आश्रममें आकर स्त्री पागल क्यों हो जाती हैं····?

पण्डितराज : भट्टाचार्य !

भट्टाचार्य : [आँख खोलते ही] ओ देवि माँ ! लाइए ··ला····इ··· ए, हम थोड़ा सो गया था, कुछ थक गया है।

देवि माँ : जलपान कीजिए ! आते समय रास्तेमें कुछ कष्ट हुआ है क्या ?

भट्टाचार्य : नेहीं-नेहीं कुछ नेहीं ! कुछ नेहीं, आप कष्ट मत कीजिए, घरमें जाकर आराम कीजिए, हम जलपान कर लेगा !

देवि माँ : लजाते हैं क्या आप ?

पण्डितराज : ठीक है, ठीक है भट्टचार्य ! [संकेतसे कुछ न बोलनेका आग्रह] सुमिरन, सब ठीक है !

[भट्टाचार्य जलपान समाप्त करते हैं ।]

देवि माँ : और लीजिए, देखिए संकोच मत कीजिए । थोड़ा-सा और····थोड़ा !

पण्डितराज : [पहले संकेतसे] देविका बनाया जलपान है । भाग्य देखो । ईश्वर तू कृपालु है । दयानिधि है तू !

भट्टाचार्य : बहुत अच्छा जलपान है, जितनी सुन्दर, आप हैं····।

[भट्टाचार्यकी दृष्टि पण्डितराजसे मिलती है । पण्डितराज हाथ जोड़े हुए भट्टाचार्यसे अधिक न बोलनेका संकेत करते रहते हैं ।]

पण्डितराज : भट्टाचार्य ! [न बोलनेका संकेत]

देवि माँ : यह जगह तो बिलकुल अच्छी नहीं है । इधर सड़क उधर गली । बहुत पिछड़ी और पुरानी ज़िन्दगी है यहाँ की । देखिए न, आसन लगे हैं यहाँ, न कुर्सी न मेज, न पर्दे ।

पण्डितराज : सुमिरन ! [संकेतसे घरमें ले जानेके लिए आग्रह] भट्टाचार्य ! शेष सब कुशल है न, घर-गृहस्थी तो सब ठीक है न ?

देवि माँ : मैं यहाँ रहना बिलकुल नहीं पसन्द करती । इनकी जन्मभूमि गाँवमें है—बहुत रद्दी जगह है । मैं तो वहाँ फ़ौरन ही बीमार हो जाती हूँ । इतना पर्दा है वहाँ कि····छी···· छी···छी···।

पण्डितराज : [अति स्नेहसे] अब तुम भट्टाचार्यके लिए भोजनकी तैयारी करोगी न ?

भट्टाचार्य : नेहीं नेहीं, अब हम जायगा ! जलखाई बहुत हुआ है ।

[पण्डितराज चुप रहनेका संकेत करते रहते हैं ।]

देवि माँ : अच्छा आज्ञा दीजिए ! तब तक आप विश्राम कीजिए ! धन्यवाद ! क्षमा कीजियेगा···।

[देवि माँका प्रस्थान]

भट्टाचार्य : अहा हा ! कौन कहता है कि देवि माँ किंचित्···।

पण्डितराज : हाँ हाँ अब पूर्ण स्वस्थ हैं । अनेक ओषधियों एवं उपचारों-से अब इनकी ऐसी स्थिति हुई है । पर कभी-कभी थोड़ा-सा उसका आक्रमण हो जाता है, पर अब देवि स्वस्थ हो जायँगी ।

भट्टाचार्य : हाँ, पण्डितराज ! ज़रा सुनो तो, इस संबंधमें तुम कभी अपने गुरू स्वामीजीसे नहीं मिला ?

पण्डितराज : आचार्य गुरु महाराज स्वामी अभी जीवित हैं क्या ?

भट्टाचार्य : अरे तुमको पाता नहीं ? शामीजी जीवित है अभी । वैराग्य आश्रममें प्रविष्ट है । अभी कुछ दिन हुआ हम उनका दर्शन माथुरामें किया है ।

पण्डितराज : गुरुजीके दर्शन किये हैं ? सच भट्टाचार्य ?

भट्टाचार्य : हाँ ! हाँ ! परन्तु छुपकर दर्शन किया है । सामने जानेका हिम्मत नहीं हुआ । उनका शिष्य होकर बैंकमें क्लर्क हूँ, हम क्या उत्तर देता उनको ?

पण्डितराज : [चित्रके सामने श्रद्धामय] मेरे परम आचार्य गुरुजीसे मेरा दर्शन कराओ भट्टाचार्य ! अभी चलो तुम ! हम लोग यहाँसे सीधे मथुरा चलें । अभी···अभी···चलो बन्धु !

उनकी ओषधि क्या, उनके दर्शनमात्रसे देवि-पूर्ण स्वस्थ हो जायँगी।

भट्टाचार्य : हम तैयार हैं, तुम्हारी दशा और चिन्ता हम नेहीं देखने सकेगा।

पण्डितराज : तुम देवदूतकी भाँति आये भट्टाचार्य! सच तुमने मुझे नया जीवन दिया। विश्वास मानो, सुन्दर रसकी सारी कमाई मैंने देविके स्वास्थ्यपर लगा दी। घरपर दो शिष्योंको संस्कृत पढ़ाता हूँ। ऐसे मकानमें पिछले तेरह वर्षोंसे जीवन व्यतीत कर रहा हूँ। मेरी इतनी सुन्दर पत्नी···।

भट्टाचार्य : घाबड़ाओ नेहीं! अपने गुरु आचार्य शामीजी कोई एक खुराक दवा देदेगा—नेहीं तो कोई जड़ी बूटी पिला देगा, बस तुरन्त सब ठीक! को बोल्लामकी ठीक तो तुम्हीने कर लिया है। हमको तो नेहीं लगता कि देवि माँपर उसका 'फिट' आ जाता है। ऐसा माफिक 'फिट' तो सभी औरतपर आ जाता है।

पण्डितराज : भट्टाचार्य, मैं देविको तैयार करता हूँ, हम सब लोग आज ही की गाड़ीसे मथुरा चलेंगे!

भट्टाचार्य : हम तो बोल दिया! तूमरा संग चलेगा! 'ए फ्रेंड इन नीड ए फ्रेंड इन डीड।' हमें तुम क्षमा करना पण्डितराज, सब संस्कृत भूल गया। 'क्रेडिट···डेबिट···क्रेडिट···डेबिट··· चैकबुक···कैश बुक···लेजर···लेजर···[**रुककर**] नो प्लेजर नो प्लेजर'!

[**इस बीच पण्डितराज अन्दर चले जाते हैं। भट्टाचार्यजी उसी भाँति चिन्तामग्न हैं।**]

भट्टाचार्य : तुम अन्दर चला गया पण्डितराज ! एक गिलास जल लाना, जल, शीतल जल। ओ सुमिरन, एक गिलास जल !

[सुमिरन जल दे जाता है।]

पण्डितराज : [बहुत ही प्रसन्न] सब ठीक है बन्धु, तैयारी होने लगी। [भट्टाचार्यको अंकमें लेकर] खोखा बन्धु ! कहाँसे आ गये तुम ? भाग्य ही मैं कहूँगा इसे।

भट्टाचार्य : छोड़ो छोड़ो, हम इतना सुन्दर थोड़े ही हैं। [रुककर] हमको कुछ दोगे ? देगा कि नेई ?

पण्डितराज : [हँसते-हँसते] जो माँगो भट्टाचार्य, कुछ भी संकेतभर कर दो।

भट्टाचार्य : माँगूँ ! माँग लूँ ? कहीं बहाना तो नेई बनाय देगा ?

पण्डितराज : कभी नहीं, कभी नहीं, आज्ञा दो प्रिय बन्धु !

भट्टाचार्य : दो खुराक सुन्दर रस।

पण्डितराज : ओ हो ! तुम अभी कितना सुन्दर बनोगे भट्टाचार्य ? तुम जितना चाहो उतना सुन्दर रस ले जाओ। घड़ों भरवा दूँ तुम्हारे लिए !

भट्टाचार्य : नहीं बाबा हम 'ब्लैक' नहीं करता। हमें तो सिर्फ़ दो खुराक सुन्दर रस चाहिए। एक अपने लिए और एक···· उनके लिए····समझ गया····हाँ, एक खुराक गिन्नीके लिए।

[दरवाज़ेसे दोनों शिष्योंका प्रवेश]

शक्तिदेव : गुरुजी ! गुरुजी !

जैनाथ : गुरुजी !

पण्डितराज : क्या है ? कैसे आ गये तुम लोग ?

जैनाथ : गुरुजी, शक्तिदेव कहता है कि आपका 'सुन्दर रस' केवल स्त्रियोंको ही सुन्दर बनाता है।

पण्डितराज : नहीं, सबको सुन्दर बनाता है—समस्त प्राणिमात्रको !

शक्तिदेव : गुरुजी, जैनाथ कहता है कि 'मेरी स्मरण शक्ति'····।

जैनाथ : नहीं गुरुजी, यह अपने लिए कहता है।

पण्डितराज : चले जाओ तुम लोग यहाँसे ! संस्कृत भाषा और शास्त्र पढ़ने चले हैं।

शक्तिदेव : [कुछ क्षणोंके बाद] जायँ गुरुजी हम लोग ?

[भीतरसे सहसा अच्छे वस्त्र पहने हुए तथा पतिके लिए अच्छे वस्त्रके साथ देवि माँका प्रवेश]

पण्डितराज : लो····देवि तैयार हो गयीं ! चलो पहले भोजन कर लें, फिर कपड़े बदल लूँगा !

देवि माँ : नहीं, अभी पहनिये ! क्या नंगे बदन रहते हैं ?

भट्टाचार्य : देवि माँ, गुरुकुलमें तो यह बिलकुल नंगे रहते थे। सिरपर खाली चुटिया पहने थे !

शक्तिदेव : देवि माँ ! देवि माँ !

जैनाथ : आप स्वस्थ है ! कहीं जा रही हैं क्या ?

शक्तिदेव : सुनिए गुरुजी, कहाँ जा रहे हैं आपलोग ?

पण्डितराज : [क्रोधमें] चले जाओ यहाँसे ! निकल जाओ !

[शिष्य भागते हैं।]

देवि माँ : [उसी भाँति] चले जाओ ! गेट आउट ! चले जाओ ! चले, एकवचन···चले···एकवचन···नहीं, बहुवचन !

पण्डितराज : देवि ! देवि !···शान्त····शान्त !

देवि माँ : धत्तेरेकी ! [हाथके सब वस्त्र फेंककर भट्टाचार्यकी ओर

बढ़ती हुई] आपकी तारीफ़ ? आप कौन साहब हैं ? बोलिए····बोलिए, जवाब दीजिए !

पण्डितराज : देवि ! देवि ! शान्त !

भट्टाचार्य : ओ माँ ! माँ कुछ नहीं ! हमें माफ़ी दो माँ !

पण्डितराज : सुमिरन ! दौड़ो जल्दी !

देवि माँ : आप इस तरह मुझे क्यों घूर रहे हैं ?

भट्टाचार्य : माँ ! हम आँख बन्द कर लेता है ! हम इधर देखेगा !

[सभय दूसरी ओर मुड़कर खड़े हो जाते हैं । सुमिरन दौड़ा आता है ।]

पण्डितराज : सुमिरन, सँभालो ! ओषधि नहीं पिलायी थी क्या ?

देवि माँ : धत्तेरे की ! इधर देखो !

सुमिरन : पिलायी थी महाराज ! भोजन बनानेसे गर्मी लग गयी है महाराज !

पण्डितराज : देवि ! देवि ! आओ मेरे संग आओ ! चलो भीतर चलें !

सुमिरन : माँजी आइए ! चलिए स्नान कर लीजिए !

देवि माँ : [मुखपर हाथ रखकर बाजेकी भाँति बजा देती हैं ।] एक दो···तीन !

पण्डितराज : सुमिरन, बाजा ले आओ ।

[सुमिरन भीतर भागता है ।]

देवि माँ : [भट्टाचार्यकी ओर जाती हैं] आप कौन हैं ? आप यहाँ क्यों आये ? [भट्टाचार्य दूसरी ओर मुख मोड़ लेते हैं ।] मुझे देखिए !

[इसी समय सुमिरन आता है—बाजा देवि माँ सहर्ष ले लेती हैं ! और भट्टाचार्यके मुखके पास बजाने लगती हैं ।]

पण्डितराज : हे ईश्वर ! हे ईश्वर ! हे गुरुमहाराज, स्वामीजी ! मेरे परम आचार्य !

[बाजा बजाते-बजाते सहसा देवि माँको सुधि हो जाती है । और वह प्रकृतिस्थ हो अपने सहज भावमें आकर लज्जासे चुप खड़ी रहती हैं ।]

पण्डितराज : [प्रसन्नतासे] भट्टाचार्य ! भट्टाचार्य ! अब इधर देखो ! देखो अब इधर !

भट्टाचार्य : [आँख मूँदे हुए पलटते हैं] ओ माँ ! ओ माँ !

पण्डितराज : आँख खोलो भट्टाचार्य ! खोलो अब ।

[आँख खोलते ही देवि माँको देखकर पुनः डरसे आँख मूँद लेते हैं । पुनः आँख खोलकर दमभर साँस लेने लगते हैं । देवि माँ सिर झुकाये सलज्ज खड़ी हैं ।]

पर्दा

दूसरा अङ्क

[दो महीने बाद, पर्दा फिर उसी स्थानपर उठता है। पर कमरेका सारा रूप बदल गया है। दीवारपर देवि माँका चित्र लगा है। बैठनेके लिए, बिलकुल नये ढंगकी हल्की, ख़ूबसूरत तीन कुर्सियाँ, बीचमें छोटा गोल टेबुल, जिसपर कवर लगा है। लैम्प स्टैंड, फलावर बेस, जिसमें ताज़े फूल लगे हैं। दूसरी ओर दीवान, जिसपर कवर पड़ा है। बीचमें खुली हुई छोटी-सी आलमारी बीचके ख़ानोंमें किताबें सजी हैं—ऊपर बच्चोंके कुछ खिलौने रक्खे हैं—बीचमें कपड़ेकी एक गुड़िया सजी रक्खी है। दरवाज़ोंपर मेल खाता हुआ एक सुन्दर पर्दा झूल रहा है। संध्याका समय है।

गलीके दरवाज़ेसे दोनों शिष्य प्रवेश करते हैं। पूर्णतः परिवर्तित कमरेको देखकर वे डर जाते हैं। आश्चर्य एवं कुतूहलसे फिर एक-एक वस्तु देखने लगते हैं।]

शक्तिदेव : [कुछ देर बाद] जैनाथ, यह सब क्या हो गया !···वही कमरा है न ?

जैनाथ : हाँ, वही स्थान है। धीरे-धीरे बोल !

शक्तिदेव : [आसनपर बैठकर] अहा हा ! परिवर्तन ही सृष्टिका नियम है। कितना सुन्दर, मनोहर एवं दिव्य कक्ष हो गया यह। जैनाथ ! [सहसा देवि माँका चित्र देखकर दौड़ता है]····आँ···देवि माँ !

[दोनों आश्चर्यचकित चित्र देखते हैं।]

शक्तिदेव : बताओ जैनाथ।

जैनाथ : लगता है देवि माँ बिलकुल स्वस्थ हो गयीं। उन्हींके हाथोंसे यह कमरा सुसज्जित किया गया है।

शक्तिदेव : अहा हा! क्यों न हो! क्यों न हों! पता है तुझे, देवि माँ एक अँग्रेज़ी कालेजके प्रिंसपलकी लड़की हैं। दशम कक्षा तक अँग्रेज़ी पढ़ी हुई हैं। इन्ट्रेस पास हैं!

जैनाथ : पता नहीं, अब सुन्दर रस हमें देंगी या नहीं। इसीलिए गुरुजीने हमें एक महीनेकी छुट्टी दे दी थी। बेकार ही में हमें घर जाना पड़ा। इस बीच···।

[शक्तिदेव आलमारीपर सब कुछ निहारता हुआ, सहसा गुड़िया उठाता है—उसमेंसे आवाज़ सुनकर डरसे चीख़ पड़ता है और उसे फेंककर जैनाथसे चिपट जाता है।]

जैनाथ : प्राण है उसमें क्या? नहीं-नहीं, मैं देखता हूँ। निर्जीव गुड़िया है यह। छोड़ो, मैं देखता हूँ। [बड़े साहस और हिम्मतसे गुड़िया उठाता है] देखा! गुड़िया तो है! डरपोक कहीं के। [हिलाते-डुलाते समय गुड़ियासे पुनः वही स्वर निकलता है, जैनाथ सहसा उसी भाँति डरसे चीख़ पड़ता है।

दोनों शिष्य एक दूसरेको मज़बूतीसे पकड़े खड़े हैं। भीतरसे बीनाका प्रवेश]

बीना : [दोनों शिष्योंको उस भाँति देखते ही] कौन हो तुम लोग? भागते कहाँ हो? पकड़ लो···पकड़ लो! चोर··· चोर···!

[शिष्योंके पीछे दौड़ती है। भीतरसे दौड़ा हुआ सुमिरन आता है। दोनों शिष्य गलीमें भाग गये हैं। सुमिरन गलीके दरवाज़ेपर रुक जाता है।]

सुमिरन : [बुलाता है] आओ····आओ····आ जाओ बाबू लोग !
[हँसता है ।]

बीना : कौन हैं वे लोग ? बोलते क्यों नहीं ? पागल है क्या ये लोग ?

सुमिरन : महराजजीके शिष्य हैं···शक्तिदेव बाबू और जैनाथ बाबू । [हँस पड़ता है] आपने क्या समझा कि चोर घुस आये हैं ? [दोनों शिष्य दरवाज़ेसे झाँकते हैं] आ जाओ···आ जाओ बाबू लोग । डरो नहीं यह बीबीजी हैं····देवि माँ की छोटी बहिन ।

[दोनों शिष्य हिम्मतसे आते हैं, और बड़े विनयसे नमस्ते करते हैं ।]

सुमिरन : बीबीजी आप लोगोंको देखकर डर गईं । [हँसता है] चोर····चोर····।

[बीनाको देखकर हँसना बन्द कर लेता है। बीना सबकी बेवक़ूफ़ीसे अप्रसन्न खड़ी है ।]

बीना : अरे ! मैं क्यों डर गई ? [सब सामानपर दृष्टि दौड़ाकर] देखो न इन लोगोंने सारा सामान उलट-पुलट कर दिया है । [गुड़िया उठाती हुई] ओ हो, इसकी दशा देखो । यह कहाँके जंगली लोग हैं !

[उठाते ही गुड़िया फिर आवाज़ करती है, दोनों शिष्य डर जाते हैं । सुमिरन हँस रहा है ।]

सुमिरन : ये लोग गुरुजीके शिष्य हैं···पढ़ते हैं यहाँ !

बीना : यह लोग पढ़ते हैं ? कुछ अक्ल भी है ? गँवार कहींके ! सारा उलट-पुलट दिया । [रुककर] इनसे कहो कि यह लोग जायँ यहाँसे ! यह खड़े क्यों हैं ?

[बीना सब चीज़ें ठीक करती है। गुड़ियाके कपड़े उतर-से गये हैं, उसे पुनः करीनेसे पहनानेमें व्यस्त हो जाती है।]

सुमिरन : ये लोग शिष्य हैं पण्डितजीके। पढ़ते हैं यहाँ।

बीना : पढ़ते हैं?

शक्तिदेव : और नहीं तो क्या?

बीना : बोलनेकी तमीज़ नहीं?

जैनाथ : देवि माँकी चिकित्साके सम्बन्धमें गुरुजीने हमें एक माहकी छुट्टी दी थी। हम गुरुजीके बहुत प्रिय शिष्य हैं, हाँ!

सुमिरन : ठीक कहते हैं ये लोग।

शक्तिदेव : और नहीं तो क्या? हमारे गुरुजी कहाँ हैं?

जैनाथ : जल्दी बताओ!

सुमिरन : सुनो सुनो। देवि माँ अच्छी हो गईं। देखो न, घर कैसा बदल दिया। देवि माँको अब देखोगे तो····। बिलकुल बदल गईं। बहुत गम्भीर और इन्तजामकार। सुनो, मुझे बहुत मानती है। देखो न मेरे कपड़े।

[गुड़िया अभी जल्दीमें नहीं ठीक हो पा रही है।]

बीना : क्या बक बक चक बक कर रहा है? जाओ गलीमें बातें करो।

शक्तिदेव : आओ सुमिरन!

सुमिरन : [कुछ क्षण रुककर] देविमाँ अभी आ रही होंगी। बाज़ार गई हुईं हैं। गृहस्थीका सामान लाने। महाराजजी आज आनेवाले हैं न।

शक्तिदेव : आचार्यजी नहीं हैं?

जैनाथ : कहाँ गये हैं?

बीना : नहीं चुप होगे तुम लोग ? आने दो जीजीको ! सुमिरन, मैं तुम्हारी भी शिकायत करूँगी ! गुड़िया तोड़ डालो····।

सुमिरन : बीबी जी ! एक महीनेके बाद आये हैं ये लोग। देवि माँ इन लोगोंको भी बहुत मानती है।

जैनाथ : हाँ, सच मानती हैं।

शक्तिदेव : और नहीं तो क्या ?

बीना : यहीं पढ़ते-लिखते हैं ये लोग ? आप लोग क्या पढ़ते हैं ?

[गुड़ियाको यथास्थान रखती है।]

जैनाथ : तुम्हीं बता दो न।

शक्तिदेव : [बतानेकी मुद्रा बनाता है] सुमिरन ! बताया नहीं गुरुजी कहाँ गये हैं ?

[बीना पर्दे ठीक करती है।]

सुमिरन : हाँ, पण्डित महाराज मथुरा जी गये हैं—अपने गुरुजीके पैर छूने। आज बीस दिन हुए उनको गये। देवि माँने जवाबी तार दिया था, जवाब आया है—पण्डित महाराज जी आज आयेंगे।

बीना : नहीं चुप होगे तुम। [जाती हुई] लो जी भर चीखो-चिल्लाओ। पता नहीं जीजी कैसे रहती थीं यहाँ ?

[प्रस्थान]

शक्तिदेव : चली गयीं ?

जैनाथ : सुमिरन, दरवाज़ा बन्द कर लो।

सुमिरन : अरे राम ! सब दरवाज़ोंपर पर्दा लग गया है। [रुककर] देवि माँकी छोटी बहन हैं, बी० ए० पास हैं। अभी इनकी शादी नहीं हुई है।

शक्तिदेव : सच ! अब तक नहीं हुई है—अरे !

जैनाथ : देवि माँकी सगी बहन हैं ?

सुमिरन : देवि माँ पहिली माँकी हैं, यह दूसरी माँकी हैं—देवि माँके पिताजी प्रिंसपल साहब यहाँ आये थे। बड़ी ख़ुशी मनाई गई है। मुझे इनाम बख्शीश मिला है।

[अपने कपड़े दिखाता है।]

शक्तिदेव : हाय हाय ! हमारा दुर्भाग्य ! हमारा दुर्भाग्य !

जैनाथ : अब क्या होगा शक्तिदेव ? हे भगवान् सुन्दर रस 'सुन्दर रस' एक ही ख़ुराक।

[दोनों हाथ जोड़े विनय स्वर में]

शक्तिदेव : बस एक ही ख़ुराक मुझे भी भगवान् ! हम ग़रीब विद्यार्थियोंपर दया करो भगवान् ! हम तेरी शरण हैं। [सहसा प्रार्थना स्वरमें] शरणमें आये हैं हम तुम्हारी !

जैनाथ : दया करो हे दयालु भगवन् !

[दरवाज़ेसे सहसा किसीकी पुकार आती है।]

शक्तिदेव : बाबू लोग चुप रहिए, कोई पुकार रहा है। आप लोग बैठ जाइए।

सुमिरन : कहाँ बैठें ? हमारा आसन कहाँ है ?

जैनाथ : कैसे बैठें हम ?

सुमिरन : [दरवाज़ेपर बढ़कर] कौन साहब हैं ? आइए—आइए [वकील साहब केदार बाबूका मुँहमें सिगरेट दबाये हुए प्रवेश]

शक्तिदेव : हाँ हाँ हाँ ! यहाँ धूम्रपान नहीं। फेंकिए—फेंकिए !

जैनाथ : आपका परिचय ?

केदार : [सिगरेट बुझाकर फेंकते हुए] मेरा नाम केदार बाबू है—मैं यहाँ वकील हूँ।

सुमिरन : [सिगरेटका टुकड़ा उठाता हुआ एक बार गुस्सेसे देखता है फिर एस्ट्रेमें रख देता है] यहाँ फेंक देते हैं ? पहलेका ज़माना गया बाबू साहब, हाँ।

[अन्दर जाने लगता है। केदार बाबू एक कुर्सीपर आरामसे बैठ जाते हैं।]

सुमिरन : आप लोग भी बैठ जाइए न–'ड्राइंग रूम' हो गया यह।

[अन्दर जाता है—दोनों शिष्य डरते-डरते बहुत सम्हाल कर कुर्सियोंपर बैठते हैं। वकील साहब बदले हुए कमरेकी सुन्दर सज्जासे चकित हैं।]

केदार : इस कमरेकी तो पूरी शक्ल ही बदल गयी। क्यों, पण्डित-राजका यही घर है न ?

शक्तिदेव : हाँ जी, मेरे गुरुजीका ही यह कमरा है।

केदार : आपकी तारीफ़ ?

शक्तिदेव : मेरा नाम श्रीशक्तिदेव प्रसाद पाण्डेजी है, और आप हैं श्रीजैनाथ त्रिपाठी !

जैनाथ : हमलोग पण्डितराजके शिष्य हैं।

[केदार उठकर पुनः कमरा देखते हैं।]

केदार : यह कमरा तो बहुत ही खूबसूरत हो गया। पण्डितजी कहाँ हैं ?

शक्तिदेव : आपको नहीं मालूम ! पण्डितजी महराजकी धर्मपत्नी अर्थात् हमारी देवि माँ अब बिलकुल ठीक हो गयीं।

केदार : जिनका कुछ दिमाग़ खराब था ?

जैनाथ : हाँ, किञ्चित् था।

शक्तिदेव : अब पूर्णतः अच्छी हो गयीं।

केदार : अच्छा, बड़ी ख़ुशीकी बात है। तभी इस कमरेकी हालत

इतनी सुधर गयी—मैं कहूँ कि क्या हो गया। "वेरी गुड, नो लाइफ़ विदाउट गुड वाइफ़"।

शक्तिदेव : क्या कहा आपने ?

जैनाथ : शीतल जल चाहिए क्या ?

केदार : नहीं जी, मुझे कुछ नहीं चाहिए।

शक्तिदेव : बैठिए···बैठिए···आप उठ क्यों गये ? आसन ग्रहण कीजिए।

जैनाथ : आप कुछ चिन्तित एवं असन्तुष्टसे लग रहे हैं।

[भीतरसे सहसा बीनाका प्रवेश। देखते ही दोनों शिष्य उठकर किनारे खड़े हो जाते हैं और सभय बीनाको देखते रहते हैं।]

बीना : कुर्सीपर बैठनेकी तमीज़ नहीं ?

शक्तिदेव : कमीज़ है मेरे पास···घरपर है।

बीना : बहरे हो क्या ? सुनायी भी नहीं देता। [केदारसे] आप कौन साहब हैं ? तशरीफ़ रखिए।

[बीच-बीचमें बीना ग़ुस्सेसे दोनों शिष्योंको देखती रहती है।]

केदार : आप···आप···।

बीना : जी हाँ, मैं देवि माँकी छोटी बहन हूँ।

केदार : [कुर्सीपर बैठते हुए] आप बहन हैं ? पण्डितजी कहाँ हैं ?

बीना : बाहर गये हैं, मथुरा तक।

केदार : कब आयेंगे ?

बीना : आज आ रहे हैं।

र : आप सच छोटी बहन हैं देविजीकी ?

बीना : जी हाँ।

केदार : [गुस्सेसे उठकर] कितने धोखेकी बात है यह। पण्डितजी-ने अपनी देविजीको असली 'सुन्दर रस' पिलाकर इतना खूबसूरत बना लिया। और मुझे नकली 'सुन्दर रस' दिया। पूरे दो सौ इक्कावन रुपये लिये हैं मुझसे! मैंने उसका सेवन किया, मुझे देखिए मुझमें कोई फ़र्क नहीं आया—मैं वैसाका वैसा ही हूँ।

[पाकेटसे दर्पण निकालकर अपने-आपको देखने लगते है। दायेंसे बायें, नीचेसे ऊपर। बीना गुस्सेसे देखती हुई अन्दर चली जाती है।]

जैनाथ : नहीं लाभ हुआ आपको? आपने सुन्दर रसका सेवन किया था?

शक्तिदेव : उसकी सम्पूर्ण विधि और उपचारका पालन किया था?

केदार : और नहीं तो क्या? ठीक ढाई महीने तक मैं अपने कमरे में पड़ा रहा। धूप-धुआँ और धूलको मैंने देखा तक नहीं, छूनेको कौन कहे। दूध, फल-फूलका सेवन, और सुबह शाम चन्द्रोदय उपटनका लेपन। मेरी नयी-नयी वकालत खाकमें मिल गयी।

शक्तिदेव : सुमिरन! शीतल जल लाओ।

[दोनों शिष्य केदार बाबूके आवेशसे घबड़ा गये हैं।]

केदार : मेरे पास 'सुन्दर रस' खरीदनेकी पक्की रसीद है। मुझे इस दवासे क़तई फ़ायदा नहीं हुआ। मुक़दमा चलाऊँगा पण्डित-जीपर।

[सुमिरन भीतरसे जल लाता है।]

शक्तिदेव : लीजिए वकील साहब, शीतल जल पीजिए।

केदार : पानी अपने गुरुके सिरपर रखो ! मेरे भीतर आग लगी है। जिस लड़कीसे मेरा प्रेम है, उससे मेरी शादी रुकी हुई है। मेरी सारी ज़िन्दगी ख़तरेमें है। देखो इस कमरेको। देविजी जैसी ख़ूबसूरत औरतके हाथ लगते ही यह कमरा कितना हसीन हो गया !

[कहते-कहते सुमिरनके हाथसे लेकर पूरा गिलास एक साँसमें ख़ाली कर देते हैं]

जैनाथ : सुमिरन, और शीतल जल लाओ।

केदार : नहीं, मेरे पास इतनी फ़ुरसत नहीं ! मै जा रहा हूँ अब !

सुमिरन : रुकिए रुकिए ! महाराजजी आने ही वाले हैं।

शक्तिदेव : जी हाँ, आप आसन ग्रहण कीजिए ! कहिए तो आपके मनोरञ्जनके लिए मैं कुछ संगीत प्रस्तुत करूँ !

केदार : नहीं; मैं केवल ऊषाके संगीतका पुजारी हूँ।

जैनाथ : अयँ ! यह ऊषा कौन है ?

केदार : चुप रहो। ख़बरदार जो मेरी ऊषाका नाम लिया।

[सुमिरन मुँह दबाये भीतर जाता है।]

शक्तिदेव : आप क्षमा कीजिए। अब हम सब समझ गये।

[केदार बाबू काग़ज़ और पेन निकालकर एक चिट्ठी लिखते हैं। दोनों शिष्य डरे-से आपसमें देखते रहते हैं।]

केदार : [चिट्ठी लिखकर जैनाथको देते हुए] पण्डितराजके नाम मेरी यह चिट्ठी है। आते ही उन्हें दे दीजियेगा। मेरे पास इतनी फ़ुरसत नहीं है। 'परसनल-लेटर' है, आप लोग इसे पढ़ियेगा नहीं।

जैनाथ : अच्छी बात है।

केदार : [जाते-जाते] आते ही यह चिट्ठी पण्डितजीको दे दीजियेगा।

शक्तिदेव : अजी विश्वास रखिए।

[केदार बाबूका प्रस्थान। क्षणभर बाद दोनों शिष्य गलीमें मुड़-मुड़कर देखते हैं।]

शक्तिदेव : गया, चला गया।

जैनाथ : नाम देखिए, केदार बाबू! इन्हें सब केदार बाबू कहे!

शक्तिदेव : हमारे गुरुजीकी निन्दा करने आया था! मारो तो···भाग गया!

[भीतरसे दौड़ा हुआ सुमिरन आता है।]

सुमिरन : क्या है बाबू लोग! बहुत शोर मत कीजिए! बीना बीबीजी बहुत नाराज़ हो रही हैं! मुझे बहुत डाँट रही हैं।

शक्तिदेव : वही जो आया था! भाग गया बचके, वरना मैं गुरुजीके अपमानका सारा बदला····।

सुमिरन : अरे बाबू, मुझे क्यों नहीं बताया? मैं पानीमें जमालगोटा मिला दिये होता!

जैनाथ : सुन्दर होने चले थे! क्रोधी! अहंकारी!

शक्तिदेव : ऊषादेवीसे आपका प्रेम चल रहा है!

सुमिरन : अँधियारी रात जैसी सूरत-शकल!

शक्तिदेव : चिट्ठीमें क्या लिखा है?

जैनाथ : पता नहीं! मैं नहीं छूता भइया!

सुमिरन : अरे, देख न लो बाबू! कोई उल्टी-सीधी बात न लिख गया हो!

जैनाथ : देख लूँ तब? नहीं, तुम देख लो शक्तिदेव!

शक्तिदेव : अच्छा, लाओ मैं ही देख लेता हूँ! अच्छा सुमिरन, तुम्हीं देख लो! अच्छा खोल ही दो!

सुमिरन : अच्छा चाक़ू ले आऊँ !

[सुमिरन अन्दर भागता है ! शक्तिदेव और जैनाथ क्रमशः पत्र उठाते हैं, पर डरके मारे पत्र रख देते हैं। उसी क्षण पीछेके दरवाजेसे देवि माँ का प्रवेश। देवि माँ बिलकुल बदली हुई हैं—नवजीवन तथा उल्लाससे भरी हुई। करीनेसे कपड़े पहने हुए हैं। दोनों शिष्य देखते ही देवि माँका चरण-स्पर्श करते हैं।]

देवि माँ : ख़ुश रहो ! कब आये ? बैठो···बैठो !

[दोनों शिष्य कभी अपने आपको, कभी आसनको और कभी देवि माँको देखते रहते हैं।]

देवि माँ : अरे ! बैठते क्यों नहीं ? सुमिरन ! यहाँ चलो ! कमरा अच्छा लगा ? मेरा चित्र देखा ? सुन्दर है न ?

शक्तिदेव : बहुत...बहुत अच्छा माँजी।

जैनाथ : ईश्वरको बहुत-बहुत धन्यवाद। आप पूर्ण स्वस्थ हो गयीं।

शक्तिदेव : माँ जी, हमको कुछ इनाम दीजिए। मैं नित्य हनुमानजीसे प्रार्थना करता था कि हमारी माँ जीका स्वास्थ्य जल्दी ठीक हो जाय !

जैनाथ : हाँ माँ जी। कृपा कीजिए हमपर। हम जीवन पर्यन्त आपका गुण गायेंगे। [भीतरसे सुमिरन आता है। देवि माँ बाज़ारसे सामान ले आयी हैं, उसे बताती हुई]

देवि माँ : इस पैकेटको अलमारीमें रखना, और इसे बीनाको दे देना। पण्डितजी आये कि नहीं ?

सुमिरन : अभी नहीं आये ?

देवि माँ : [घड़ी देखती हुई] गाड़ी तो आ गयी होगी, आ जाना चाहिए था उन्हें अब तक। तुम्हारे गुरुजी यह कमरा देखेंगे तो कितने प्रसन्न होंगे।

सुमिरन : [जाता हुआ] आ ही रहे होंगे माँजी।

देवि माँ : [स्नेहसे] मेरी तबीयत क्या ठीक हुई कि घरसे गायब गये। कितना अच्छा कमरा हो गया। खूबसूरत है न! मेरे ही हाथोंसे इतना सुन्दर हुआ है···। [रुककर] अच्छा बोलो क्या चाहिए तुम्हें? बैठो···बैठो···अरे बैठते क्यों नहीं?

शक्तिदेव } : [नीचे बैठते हुए] यहीं ठीक है माँजी। बहुत अच्छा है।
जैनाथ }

देवि माँ : [उठकर उन्हें दीवानपर बैठाती हैं] यह भी तो आसन ही है। कुर्सी नहीं पसन्द है तो इसीपर बैठो।

शक्तिदेव : माँ जी, बात यह है कि, कोई आपकी बहन आयी हैं, डाँटती हैं वह।

जैनाथ : चुप रह। तरी । सखाती हैं कि डाटती हैं!

[देवि माँ स्नेहसे हँसती हैं।]

देवि माँ : पता है, अच्छी होते ही मै अपने पिताके यहाँ चली गयी थी—वहाँ सब मुझे देखते रह गये। 'सुन्दर-रस' की खूब चर्चा है। जो मुझे देखता है—वह 'सुन्दर रस' को पूछने लग जाता है।

शक्तिदेव : माँ जी, [दौड़कर पैरोंके पास बैठ जाता है।] थोड़ा सा 'सुन्दर रस'।

जैनाथ : [पास दौड़कर] एक खुराक इसे, और एक खुराक मुझे। जीवन भर आपका गुण गायेंगे, माँ जी।

[उसी समय भीतरसे बीना आती हैं]

शक्तिदेव : माँ जी।

देवि माँ : बैठो! बैठो!

[दोनों पुनः सगर्व दीवानपर बैठते हैं]

देवि माँ : बीना, आओ बैठो। इन्हें जानती हो, आचार्यजीके ये शिष्य हैं।

बीना : शिष्य हैं ? पढ़ते-लिखते हैं ये लोग ? [रुककर] जीजी ! मेरा तो यहाँ दम घुटने लगा !

देवि माँ : क्यों, क्या बात है बीना ! बोलो क्या बात है ! अरे, चुप क्यों हो गयी ?

शक्तिदेव : हमसे असन्तुष्ट हैं यह !

बीना : आपलोग कुछ क्षणोंके लिए बाहर चले जायें तो···!

शक्तिदेव : हाँ !···हाँ···अवश्य···अवश्य···!

[एक-एक करके शक्तिदेव और जैनाथका प्रस्थान ! गलीमें से कभी-कभी पर्दा हटाकर देखते रहते हैं।]

देवि माँ : क्या बात है बीना ? तुम्हारे लिए बहुत सुन्दर कपड़े ले आई हूँ···देखो ! अब यह कमरा कितना सुन्दर लगता है ! सुन्दर रस···।

बीना : सुन्दररस।···सुन्दररस ! सुन्दररसके विज्ञापनके लिए आप अपना विज्ञापन क्यों करने लगीं ? सोचिए; क्या यह उचित है ?

देवि माँ : बीना···!

बीना : कितना शोर मचता है यहाँ ! एक वकील साहब यहाँ आये थे; पागलों जैसे चीख रहे थे···वे सुन्दर नहीं हो सके। सुन्दर-रससे उन्हें फ़ायदा नहीं हुआ। बेसिर-पैरकी बातें करके चले गये। यह एक प्रतिष्ठित व्यक्तिका कमरा है; कोई होटलका कमरा नहीं···?

देवि माँ : तुझे कुछ अनुभव नहीं बीना ? सुन्दर-रसके लिए···।

बीना : जी हाँ ! आप अपनी सुन्दरताका ऐसा विज्ञापन करें।

हमारे पापा इतने सम्मानित व्यक्ति हैं; क्या आदर्श हैं उनके····! और आपने जीजी, यह तस्वीर यहाँ टाँग रक्खी है····।

देवि माँ : बीना ! तुम्हें मुझसे ईर्ष्या हो रही है !

बीना : जीजी !···आपमें ईश्वर है । आप कभी ऐसा न सोचिए ! मुझे कोई ईर्ष्या नहीं । मैं इसीके लिए डर रही थी, कि आप झट यह सोच बैठेंगी····नहीं तो; मैं जिस दिनसे यहाँ आई हूँ; उसीदिन मैं आपसे यह कहना चाहती थी कि सौन्दर्य प्रदर्शनका सत्य नहीं !

देवि माँ : बीना, मर्यादामें रहो ।

बीना : मै भी यही सोचती हूँ !

देवि माँ : राजनीतिकी भाषा मुझसे मत बोलो ?

बीना : कैसे बोलूँ···कैसे समझाऊँ जीजी ! पर मैं आपसे सहमत नहीं हूँ, इसमें कहीं ईर्ष्या नहीं है जीजी ! यह अन्तस्की बात है ! संस्कार और मर्यादाकी बात है !

[जाने लगती है ।]

देवि माँ : [उठती हुई] बीना····! बीना····!

[बीनाके पीछे-पीछे अन्दर जाती हैं ।]

[दोनों शिष्य पर्देके दायें-बायेंसे झाँककर देखते है, और पैर दबाये हुए पुनः प्रविष्ट होते हैं ।]

शक्तिदेव : माँजी हमें सुन्दर रस अवश्य देंगी !

जैनाथ : देखो क्या होता है ।···हे राम ! यह बीनाजी कहाँसे आगयीं !

शक्तिदेव : आओ कुर्सीपर बैठें ।

जैनाथ : भइया तुम्हीं कुर्सीपर बैठो ! मैं तो यहीं बैठता हूँ ।

[शक्तिदेव कुर्सीपर बैठता है, और जैनाथ नीचे फ़र्शकी क़ालीनपर। दोनों आरामकी मुद्रामें जैसे सोनेकी तैयारी करने लगते हैं।]

जैनाथ : सो न जाना! भीतरकी ओर कान लगाये रखना। कहीं बीनाजीने देख लिया तो····।

शक्तिदेव : चुप रहो!

[दोनों शिष्य सोनेसे लगते हैं। कुछ ही क्षणों बाद कंधेपर झोला और हाथमें डण्डा लिये पण्डितराज पधारते हैं, और कमरेमें पाँव रखते ही घबड़ा जाते हैं।]

पण्डितराज : अयँ! यह किसका निवासस्थान है? घर बदल दिया क्या? यहाँ कौन रहने लगा?

[वापस जाते-जाते फिर एक बार लौटते हैं]

हे भाई! सुनो बन्धु! ज़रा जागिए! मेरी बात सुनिए!

जैनाथ : हैं! कौन है?

शक्तिदेव : चले जाओ यहाँसे!

जैनाथ : बकवास मत करो!

पण्डितराज : कौन? जैनाथ!

[दोनों शिष्य हड़बड़ाकर उठते हैं, और भागकर गुरुजीका चरण-स्पर्श करते हैं। और श्रद्धा-वश उनके सामानको ले लेते हैं।]

पण्डितराज : यह किसका कमरा है? कोई और आ गया क्या?

शक्तिदेव : गुरुजी, यह आपका ही कमरा है! आइए···पधारिए!

जैनाथ : आइए गुरुजी, इस आसनपर बैठिए! [पुकारते हुए] देवि माँ! सुमिरन! गुरुजी आ गये।

[भीतरसे देवि माँ और सुमिरनका प्रवेश। देवि माँ झुककर पण्डितजीके चरण-स्पर्श करती हैं। सुमिरन प्रणाम करता है। पण्डितराज पूर्णतः हतप्रभ हैं।]

देवि माँ : सुमिरन ! सामान अन्दर ले आओ !

[सुमिरन सामान सहित भीतर जाता है।]

देवि माँ : आइए···आइए ! आप इस तरह क्यों देख रहे हैं ? अरे ! यह आपहीका कमरा है। बैठिए। चाहे कुर्सीपर बैठिए, चाहे इस आसनपर !

पण्डितराज : देवि !

देवि माँ : इतना सुन्दर ड्राइंग रूम ! यह टेबुल क्लाथ बीनाने तैयार किये हैं ! देखिए न, कितना सुन्दर वातावरण है !

पण्डितराज : [इधर-उधर देखते-देखते] यह किसका चित्र है ? [आहत] देवि ! तुम्हारा चित्र ? ओह ! मेरे गुरु महाराजका चित्र कहाँ गया ?

देवि माँ : भीतर रखा है।

पण्डितराज : मेरे गुरुमहाराजका चित्र भीतर है। यहाँ तुम्हारा चित्र ! और वह सड़क और गलीका स्वर····फलवाला····चाटवाला बोतलवाला····।

देवि माँ : अब यहाँ किसीका शोर नहीं होता। सबको मना कर दिया है।

पण्डितराज : बीना कहाँ है ? वह यहाँसे चली तो नहीं गयी ?

शक्तिदेव : बीनाजी अभी हैं।

जैनाथ : वह देखिए आ रही हैं !

[बीनाका प्रवेश, गम्भीर मुख। सादर प्रणाम करती है।]

पण्डितराज : प्रसन्न रहो ! यह सब क्या है बीना ? तुमने किया है यह ? अरे, तुम बोल क्यों नहीं रही हो ? क्या····बात है ?

देवि माँ : बच्ची है बच्ची !

बीना : जी जी !

पण्डितराज : क्या बात है बीना, मुझे बताओ ।

देवि माँ : भोली है भोली ! कहती है कि सुन्दर रसका विज्ञापन न किया जाय ।

बीना : हाय ! यह मैंने कब कहा ?

पण्डितराज : देवि, मैं घबड़ा रहा हूँ ।

शक्तिदेव : गुरुजी ! गुरुजी ! आज्ञा दीजिए, हम लोग सब हटा दें !

[कुर्सी उठाने लगते हैं ।]

बीना : चुप रहो तुम लोग !

शक्तिदेव : गुरुजी, देखिए, यह हमें इसी तरह डाँटती हैं !

देवि माँ : [पण्डितराजका हाथ पकड़े हुए] आइए···अन्दर आइए ! चलिए जलपान करिए और तब विश्राम !

[पण्डितराजको सम्हाले हुए देवि माँ अन्दर जाती हैं ।]

देवि माँ : [जाते-जाते] बीना तुम भी आओ न !

बीना : ठीक है ! मुझे यहाँ काम है !

[देवि माँका प्रस्थान । बीना टूटी हुई गुड़ियाको ठीक करनेमें लग जाती है ।]

बीना : बन्दर कहीं के ! जिसपर हाथ लगाया, उसे सत्यानाश कर दिया ।

शक्तिदेव : [सगर्व आसनपर बैठते हुए] हम गुरुजीके शिष्य हैं, और नहीं तो क्या ?

जैनाथ : थोड़े ही दिनोंमें हम सुन्दर हो जायेंगे, तब देखियेगा।

[बीना ग़ुस्सेसे शिष्योंको देखती है।]

शक्तिदेव : तब घूरकर देखियेगा, तब पता चलेगा।

बीना : बेवक़ूफ़ हो तुम लोग!

शक्तिदेव : आप भी एक ग़ुबाक सुन्दररस क्यों नहीं पी लेतीं?

जैनाथ : परमसुन्दरी हो जायेंगी तब! अपनी बहन देवि माँको देखिए न!

बीना : चुप रहो!

शक्तिदेव : अवश्य हम चुप हो जायेंगे, पर स्मरण रहे, सुन्दररस पीकर।

जैनाथ : पूरे ढाई महीने तक चुप रहेंगे।

शक्तिदेव : फिर आप मुझे देखियेगा।

जैनाथ : मुझे भी!

बीना : [असह्य क्रोधमें] बत्तमीज़ कहींके।

[आवेशमें भीतर चली जाती हैं। दोनो शिष्य देखते रह जाते हैं।]

शक्तिदेव : बीना जी, ज़रा-सा सुन्दररस पी लें न, तो अनन्य सुन्दरी हो जायँ।

जैनाथ : क्रोध भी कम हो जाय!

शक्तिदेव : सत्यम्।

जैनाथ : शिवम्।

शक्तिदेव : सुन्दरम्!

[क्रमशः मुद्रा बनाते रहते हैं, उसी बीच घबड़ाये हुए पण्डितराजका प्रवेश।]

पण्डितराज : चिट्ठी कहाँ है? कहाँ है वकील साहब, केदारबाबूकी चिट्ठी!

शक्तिदेव : जैनाथ तुमने कहाँ रख दी ?

जैनाथ : तुमने ही तो ली थी !

शक्तिदेव : तुमने ली थी कि मैंने !

सुमिरन : लड़िए नहीं, लड़िए नहीं [देता हुआ] यह है चिट्ठी ।

पण्डितराज : कहाँ रख छोड़ी थी ?

[सुमिरन नतसिर भीतर चला जाता है । पण्डितजी पत्र पढ़ने लगते हैं ।]

शक्तिदेव : गुरुजी, वह वाचाल वकील आया था । कहने लगा कि मैंने 'सुन्दर रस' का सेवन किया मुझपर कोई प्रभाव नहीं । ऐसा कहते हुए उसे तनिक भी संकोच न हुआ ! भला ऐसे कहना चाहिए उसे !

जैनाथ : झूठा, दुर्विनीत कहींका । भाग गया नहीं तो । मुझे बड़ा क्रोध आ गया गुरुजी ! आपने बताया है कि विनय विद्याका भूषण है, नहीं तो···।

पण्डितराज : तुम लोगोंने ऐसा व्यवहार किया उसके संग ? बोलते क्यों नहीं ? क्या-क्या किया उनके संग ?

शक्तिदेव : नहीं गुरुजी । हमने बड़ा आदर किया उनका । उन्हें आसन दिया । शीतल जलके लिए पूछा । हमने प्रणाम भी किया ।

जैनाथ : स्वागत और सम्मान भी किया, पर वह आवेशमें थे हमें घूर-घूरकर देखते थे । कटुवाणीसे बोलते थे, जैसे कुछ नशेमें हों ।

शक्तिदेव : हमने उन्हें शीतल जल पिलाया । मृदुवाणीसे हम उनसे वार्तालाप करते रहे । हम लोग सतत प्रसन्नमुख

पण्डितराज : तुम लोगोंने यह पत्र मुझे क्यों नहीं दिया ? यदि बीना न बताती तो यह पत्र मुझे कैसे मिलता ? आतिथ्यमें लगे रहे, अपना कर्म भूल गये !

जैनाथ : क्षमा गुरुजी। देवि माँका दर्शन करते ही हमलोग आनन्द-विभोर हो गये ।

शक्तिदेव : ऐसे आनन्दविभोर हुए कि····कि गुरुजी····।

पण्डितराज : आनन्दमें भी दायित्वका ज्ञान रहना चाहिए । अच्छा, अब जाओ तुम लोग, बोलो क्या बात है ? बोलते क्यों नहीं ? मैं आज्ञा दे रहा हूँ, तुम लोग अब अपने निवास-स्थानपर जाओ ।

शक्तिदेव : गुरुजी ! यह जो जैनाथ है न । जैनाथ तुम स्वयं क्यों नहीं कहते ? गुरुजी, बात यह है कि····बात यह है कि ! हम लिखकर आपको दे दें गुरुजी ।

पण्डितराज : शीघ्रता करो, क्या बात है ? जाओ तुमलोग यहाँसे । मुझे एकान्त चाहिए···एकान्त ! बोलो जल्दी !

जैनाथ : गुरुजी, यह जो शक्तिदेव है न, थोड़ा सा 'सुन्दर रस' चाहता है ।

शक्तिदेव : नहीं, जैनाथ चाहता है गुरुजी !

पण्डितराज : क्या कहा ! सुन्दर होनेकी दवा चाहते हो ? कुछ ज्ञान भी है तुम लोगोंको ? तुम लोग ब्रह्मचर्य आश्रममें हो । विद्या शास्त्र ही तुम्हारा सौन्दर्य है । अखण्ड ब्रह्मचर्यका पालन ही तुम्हारे लिए एक मात्र ओषधि है । सुन्दर होनेकी दवा ! ब्रह्मचर्यको क्या समझते हो तुम ? ज्ञानराशिको क्या समझते हो तुम ? यही मर्यादा है तुम्हारी ! मेरे दुःखको नहीं समझते तुम लोग ! सत्यासत्य नहीं समझ सकते ?

[दूरसे ही साष्टांग प्रणाम करके दोनों शिष्य निकल भागते हैं। भीतरसे देवि माँ आती हैं।]

पण्डितराज : हे ईश्वर ! तू मेरी रक्षा कर ! तू अन्तर्यामी है !

देवि माँ : क्या बात है ? क्यों इतना परेशान हैं ? मुझे बताइए। क्या लिखा है ? चिट्ठी मुझे दीजिए !

पण्डितराज : वकील साहब मुझपर मुक़दमा चलानेको लिख गये हैं उनके पास प्रमाण है। सत्य असत्यको····।

देवि माँ : क्या सत्य-असत्य ?

पण्डितराज : वकील साहबके पास प्रमाण है।

देवि माँ : क्या प्रमाण है ?

पण्डितराज : मैने उन्हें सुन्दर होनेके लिए— 'सुन्दर-रस' दिया था, मूल्यमें मैंने दो सौ इक्यावन रुपये प्राप्त किये हैं। पक्की रसीद है उनके पास।

देवि माँ : इसमें क्या है ? वह अपने रुपये वापस ले सकते हैं। 'सुन्दर रस' ख़रीदने वालोंकी कमी नहीं है। जो मुझे देखता है वह सुन्दर-रसकी चर्चा करने लगता है !

पण्डितराज : [आहत होकर] देवि····देवि····अन्दर जाओ कोई आ रहा है।

[देवि माँ अन्दर जाती हैं। पण्डितराज दरवाज़ेकी ओर बढ़ते हैं।]

केदार : मैं अन्दर आ सकता हूँ ? मैंने कहा आपको मैं बधाई देता जाऊँ। बड़ा रंग है आपका ! यह कमरा, यह ठाटबाट !

पण्डितराज : आइए आइए वकील साहब। आपको बहुत कष्ट हुआ। बधाई क्या ? सब ईश्वरकी कृपा और आप लोगोंकी मङ्गल-कामना है। विराजिए··· इस आसनपर विराजिए !

केदार : मेरा खत मिला आपको ?

[कुर्सीपर बैठते हैं ।]

पण्डितराज : जी हाँ, प्राप्त हुआ । भला प्राप्त क्यों नहीं होता ! आप असत्य थोड़े ही कहेंगे !

केदार : तो आपने क्या फ़ैसला किया ? आप मेरे दो सौ इक्यावन रुपये वापस कर रहे हैं या नहीं ? मुझे साक्षात् देख रहे हैं न ! मुझपर आपके सुन्दर रसका कोई असर नहीं ! मैं अखबारमें लिखूँगा इसे !

पण्डितराज : देवि, एक गिलास शीतल जल पिलाओ मुझे । आपको भी प्यास लगी होगी । मुँह सूख रहा है आपका ! आप सन्तोष कीजिए वकील साहब । धैर्य धारण कीजिए ! धैर्य ही पुरुषका मूल आभूषण है ।

केदार : नहीं ! मेरे सारे रुपये अभी दे दीजिए । मुझे धैर्यका आभूषण नहीं चाहिए ! मुझे मेरे रुपये चाहिए—सूद-दर-सूदके सहित !

पण्डितराज : अशान्त मत होइए वकील साहब ! हम-आप कहीं भागे नहीं जा रहे हैं । हमें अपने-आपपर विश्वास रखना चाहिए । यही श्रेयस्कर जीवन है ।

केदार : मेरा जीवन तो नष्ट हो रहा है । ऊषा अगर मेरे हाथसे निकल गई तो मैं····तो मैं···!

[वकील साहब आवेशमें हैं । सुमिरन अन्दरसे पानी लाता है, पण्डितजी पानी पीते हैं । सुमिरन वकील साहबको देखता हुआ अन्दर जाता है ।]

पण्डितराज : वकील साहब, मेरा 'सुन्दर रस' कभी भी, किसीपर असफल नहीं हुआ । रस मात्रा अथवा सेवन विधिमें कुछ

अन्तर रह गया होगा। इसे मैं मान सकता हूँ। अन्तर पड़नेसे····!

केदार : क्या अन्तर होगा? अपने हाथसे आपने मुझे दवा पिलाई। ढाई महीने तक मैं चन्द्रोदयकी मालिश कराता हुआ कमरेमें बन्द रहा। मेरी नई-नई वकालत खाकमें मिल गई! ढाई महीने कम नहीं होते!

पण्डितराज : ढाई महीने तक आप बोले भी नहीं? बोलिए····उत्तर दीजिए! इस भाँति आप मेरा मुँह न देखिए। आप ढाई महीने तक चुप थे?

केदार : यह आपने कहाँ बताया था? चुप रहनेकी बात तो आपने नहीं बतायी थी!

पण्डितराज : ओं हो हो! दोष पकड़ा गया। तभी तो कहूँ, वही सुन्दर रस मैंने देविको पिलाकर इतना सुन्दर बनाया है। आपसे भी अधिक गहरा रंग था इनका। मुखपर चेचकके दाग़, ज़रा-सी नाक, छोटी-छोटी आँखें! दाँत बाहर निकले हुए।

केदार : मुझे विश्वास नहीं पड़ता।

पण्डितराज : आपके विश्वास और परम शान्तिके लिए मैं फिरसे आपको निःशुल्क 'सुन्दर रस' पिलाता हूँ। [**अन्दर जाकर सुन्दर रस लाते हैं।**]

पन्द्रह दिन ही मौन रहकर इसका प्रभाव देखिए। रंग तो बदल ही जायगा। सुन्दर रस महान् औषधि है वकील साहब!

केदार : यदि ऐसा हो जाय तो मैं फिर ढाई महीने ख़ुशीसे चुप रह लूँगा। इसके लिए मैं थोड़े भागता हूँ! मैं अखण्ड मौन धारण करूँगा!

पण्डितराज : एवमस्तु ।

[केदार बाबू प्रार्थना स्वरमें हाथ जोड़े हुए]

केदार : उषा ! हमारा प्रेम अमर हो । आशीर्वाद दो मेरी ऊषा ।

[प्रार्थना मुद्रामें आँखें मुदी ही रहती हैं ।]

पण्डितराज : आइए, आप मेरे आसनपर बैठ जाइए । [बैठाकर] पूरब दिशा मुख कीजिए । रूपसागर, सुन्दरपति, सोलह कलाधारी छविधाम, रसराज, रसिकविहारी, श्री कृष्ण भगवान्का ध्यान कीजिए । [ध्यानमें लाकर] हाँ, अब मुख खोलिए ।

[सुन्दर रस पिलाकर]

लेट जाइए । पूरा शरीर फैला दीजिए । कहीं सिकुड़न न रह जाय । दो क्षण और ! ध्यान करते रहिए ! उसी छविधाम रसराज रसिकविहारी श्रीकृष्ण भगवान्का ! [रुककर] अब शीघ्रतासे उठ जाइए । [उठाकर] देखिए, शरीरके समस्त अंगोंको खूब हिला-डुला दीजिए, ताकि समस्त नसों-द्वारा 'सुन्दर रस' शरीरभरमें व्याप्त हो जाय ।

[केदार बाबू समस्त शरीर हिलाते-डुलाते रहते हैं । बीचमें कुछ बोलना चाहते हैं, पण्डितराज बढ़कर वकील साहबका मुख पकड़ लेते हैं ।]

पण्डितराज : अखण्ड मौन ! [हाथ जोड़े हुए] छविधाम ! रसराज··· रसिकविहारी ! श्रीकृष्ण भगवान् !

[पर्दा]

तीसरा अङ्क

[वही दृश्य वही स्थान। दोपहरका समय है। नये ड्राइङ्ग-रूममें अब एक रेडियो भी दीख पड़ रहा है। सुमिरन मुदित-मनसे रेडियो-संगीत सुन रहा है

कुछ ही क्षणों बाद गलीके दरवाज़ेसे पण्डितराजका प्रवेश—पूर्णतः नये सूटमें, पर आत्मव्यथासे पीड़ित हैं, और झुँझलाहटसे हाथ-पैर जैसे काँप रहे हैं। सुमिरन स्वामीको देखते ही रेडियो बन्द करना चाह रहा है, पर बन्द नहीं कर पाता।]

पण्डितराज : बन्द करो रेडियो ! बन्द करो इसे !

[पण्डितराज स्वयं रेडियो बन्द करना चाहते हैं, पर आवेशके कारण वह भी असफल हो जाते हैं। इससे झुँझलाहट और बढ़ती है। पण्डितराज अपने नये वस्त्रोंको उतार फेंकना चाहते हैं।]

पण्डितराज : मै यह वस्त्र नहीं पहन सकता ! मै ऐसे बाल नहीं रख सकता !

[सुमिरन बेहद घबड़ाया हुआ है, और अब डर जाता है।]

सुमिरन : महाराज ! महाराज !

[उसी समय गलीके दरवाज़ेसे देवि माँका प्रवेश। नये फैशनेबुल वस्त्रोंमें सुसज्जित। आते ही पहले रेडियो बन्द करती हैं फिर पण्डितजीकी ओर बढ़ती हैं।]

देवि माँ : यह क्या कर रहे हैं आप ? क्या हो गया है आपको ? कोई देख लेगा तो क्या कहेगा ?

पण्डितराज : पागल कहेगा, यही न ! लगता है अब मैं ···। सुमिरन, शीतल जल लाओ !

[सुमिरन दौड़ा हुआ भीतर जाता है ।]

देवि माँ : आप इस तरह लौट क्यो आये ? यह क्या कर रहे हैं आप ?

[पण्डितजीको साग्रह रोक देती हैं ।]

नहीं, आप कपड़े मत उतारिए ! देर हो जायगी । [घड़ी देखकर] डेढ़ बज गये । कलक्टर साहबके बँगलेपर मीटिंग शुरू हो जायगी, फिर हम पहुँचकर क्या करेंगे ? लोग क्या कहेंगे हमें ?

[सुमिरनके हाथसे पानी पीकर पण्डितराज कुछ स्वस्थ होते हैं ।]

पण्डितराज : कुछ भी हो ! कोई कुछ भी कहे ! मै कलक्टर साहबके यहाँ नहीं जाना चाहता । देवि, तुम्हें जाना हो तो अकेली जाओ ! मुझे क्षमा करो···क्षमा !

देवि माँ : जब आपकी ऐसी ज़िद थी, तब आपने कलक्टर साहबका निमन्त्रण क्यों स्वीकार किया ?

पण्डितराज : सुमिरन ! मेरा दुपट्टा ले !

देवि माँ : नहीं !

[सुमिरन देवि माँका मुँह देखता रह जाता है ।]

देवि माँ : अन्दर जा !

[अन्दर जाता है]

पण्डितराज : निमन्त्रण तुमने स्वीकार किया देवि ! मैंने नहीं । मैं इसके

पक्षमें ही नहीं था। मैं अपनी सुखी-शान्त गृहस्थीके पक्षमें हूँ। कितनी तपस्यासे मैंने तुम्हें पूर्ण स्वस्थ किया है देवि! अब मुझे अस्वस्थ करना चाहती हो क्या?

देवि माँ : ओ हो! तो वह निमन्त्रण मैंने अपनी गृहस्थीके हितके ही लिए स्वीकार किया। इतने बड़े अफ़सरसे मिलनेका अवसर बार-बार नहीं आता। नये कलक्टर हैं। नगरके प्रतिष्ठित व्यक्तियोंसे मिलनेके लिए उन्होंने हमें यह निमन्त्रण भेजा है। आपके वहाँ न जानेसे हमारी कितनी हानि होगी, कभी इसे भी सोचा है?

पण्डितराज : बहुत सोचा है! मुझे वहाँ नहीं जाना है···नहीं जाना है! मुझपर दया करो देवि! मुझे क्या पता था कि···।

देवि माँ : नहीं जाना था तो घरसे उतनी दूर क्यों गये? रास्तेमें हमें जाते हुए कितने लोगोंने देखा है। सब कितने आदर-भावसे हमें देख रहे थे कि हम लोग कलक्टर साहबके निमन्त्रणमें जा रहे है। इतना सम्मान! पर कचहरीके चौराहेसे जब आप एकाएक वापस लौटने लगे, तो मैं हैरान रह गयी। लोग मुझसे पूछने लगे कि क्या हो गया? मैं क्या जवाब देती उन्हें? और कल कितने लोग मुझसे पूछेंगे, मैं लोगोंको क्या-क्या जवाब देती फिरूँगी! ऐसा ही था तो आप घरसे ही न जाते!

पण्डितराज : तुमने मुझे विवश किया देवि! साग्रह तुमने मुझे ये कपड़े पहनाये। ये कपड़े मुझसे नहीं पहने जाते! ये मेरे संस्कारके विरुद्ध हैं। मेरी शक्ति और परम्पराके विरुद्ध हैं।

[कहते-कहते अन्दर जाने लगते हैं। देवि माँ रास्ता रोककर खड़ी हो जाती हैं।]

देवि माँ : नहीं, आप ये कपड़े मत बदलिए ! आप इस तरह बहुत सुन्दर लगते हैं ।

पण्डितराज : देवि ! तुझे क्या हो गया है ? हे ईश्वर ! हे गुरु महाराज !

देवि माँ : चलिए ! अभी बहुत देर नहीं हुई है । लोग आपको देखेंगे कि सुन्दर रसके निर्माता आयुर्वेदाचार्यजी कैसे हैं ! कलक्टर साहब आपको देखकर कितने प्रसन्न होंगे ! कितनी बड़ी बात है यह । सुन्दर रसकी लोग खूब चर्चा करेंगे ! इसे लोकप्रियता मिलेगी । आपको अनुमान नहीं कि उस वर्गके लोग सुन्दर होनेके लिए कितने लालायित रहते हैं । कितना खर्च कर सकते हैं वे लोग ।

[**पण्डितराज एक क्षण देविको आहत दृष्टिसे देखकर फिर करुण भावसे**]

पण्डितराज : यह सुन्दर रस । इस सुन्दर रसका मैं व्यापार नहीं करना चाहता ! मैं अब इसका निर्माता एवं नियामक नहीं बनना चाहता !

[**देवि माँ सन्त्रस्त हो इधर-उधर देखने लगती हैं, फिर दौड़कर पण्डितराजको सम्हालती हैं ।**]

देवि माँ : हाय ! यह क्या हो गया आपको ? आप कैसी बातें कर रहे हैं [पुकारती हैं ।] सुमिरन ! सुमिरन !

सुमिरन : [दौड़ा हुआ आकर] क्या है माँजी !

देवि माँ : बत्तमीज़ कहींके ! कितनी बार कहा कि मुझे माँजी न कहा करो, लेकिन तुझे ···।

सुमिरन : अच्छा बहूजी !

देवि माँ : देखो, क्या हो गया इन्हें ?

[**सुमिरन पण्डितजीके समीप आता है ।**]

पण्डितराज : मैं स्वस्थ हूँ ! मुझे कुछ नहीं हुआ है। तुम ज़िद करती हो तुममें अहंकार है ! इन्हीं कारणोंसे बीना यहाँसे रूठकर चली गयी ! तुम्हारे इतने सम्मानित, हृदयवान पिता तुमसे उतना स्नेह नहीं कर पाते ! तुम्हारे अहंकारने तुम्हें ही नहीं, मुझे भी क्षत-विक्षत किया है ! [**रुककर**] तुम्हारे रूपके अहंकारने तुम्हें पागलपन दिया, और मुझे··· मुझे झूठ दिया !

देवि माँ : [**सँभालती हुई**] आइए····आइए···आप लेट जाइए ! अब अस्वस्थ लग रहे हैं ! आपको आराम करना चाहिए!

पण्डितराज : पर मेरे आरामसे देवि, तुम्हें तो आराम नहीं मिलेगा। मैं सुन्दर लगता हूँ, क्योंकि मैं इन वस्त्रोंमें हूँ। और इन वस्त्रोंकी सुन्दरता इसी कुर्सीमें बँधकर बैठनेमें है।

सुमिरन : महाराजजी, चलिए पलँगपर. लेटिए ! मैं आपके पैर दबा दूँ !

देवि माँ : हाँ चलिए कपड़े बदल डालिए। सच, आपकी तबीयत ठीक नहीं है।

पण्डितराज : नहीं, बिलकुल ठीक है।

[**आसनपर बैठ जाते हैं।**]

पण्डितराज : गुरुजीने सत्य कहा था ! इस सारे व्यापारके मूलमें जो व्याधि है, उसे देख लिया उन्होंने ! मुझे भी दिखा दिया !

देवि माँ : चलिए अन्दर ! कपड़े बदल डालिए।

सुमिरन : माँजी !···बहू जी ! भीतरसे महाराजजीके कपड़े उठा ले आऊँ, यहीं बदलवा दीजिए।

देवि माँ : बेअक्ल कहीं के ! ड्राइंगरूममें कहीं कपड़े बदले जाते हैं।

[**सुमिरन सभय अन्दर जाता है।**]

पण्डितराज : बात बातमें इतना क्रोध, ऐसे कटुवचन, यही सब तुम्हारा सुन्दर है। मेरे मित्र भट्टाचार्यने जैसे ही तब सुना कि तुम पूर्ण स्वस्थ हो गयी, तभी उन्होंने कहा, मैं तुम्हारे सुन्दर घरको देखने अवश्य आऊँगा! अब कितना स्वर्गिक हो गया होगा तुम्हारा घर। [उठकर] देवि, भट्टाचार्यजी इस तरह जब हमें देखेंगे तो क्या सोचेंगे।

देवि माँ : आप बात बहुत करने लगे हैं।

पण्डितराज : हाँ, लगता है, अब मेरी बारी आ रही है।···चलो देवि, क्रोधसे मत देखो। जहाँ कपड़े बदले जा सकते हों, वहीं ले चलो मुझे। आओ मुझे रास्ता बताओ देवि? देखता हूँ तुम्हारा यह पथ मुझे कहाँ ले जाता है।

[देवि माँके संग पण्डितराज अन्दर जाते हैं। कुछ ही क्षणों बाद भट्टाचार्यका प्रवेश।]

भट्टाचार्य : अय! कीतना बदल गया यह घर। घर तो वही है। पता भी वहीं है। अरे, गलत घरमें तो नहीं घुस गया। नहीं बिल्कुल गलत नहीं है।

[सहसा भीतरसे देवि माँका प्रवेश। भट्टाचार्यजी उन्हें पहचाननेकी कोशिश करते हैं, पर असफल होकर लौटने लगते हैं।]

भट्टाचार्य : क्षमा कीजियेगा। गल्तीसे चला आया। पहले यहाँ मेरा परम मित्र रहता था—पण्डितजी आयुर्वेदाचार्य।

देवि माँ : नमस्ते दादा।

भट्टाचार्य : दादा? कौन? ओ देवि माँ तुमी। तुमी देवि माँ। सुन्दर सुन्दर। हम तो पहचान नेई सका!

देवि माँ : आपकी बहुत उमर है दादा। अभी-अभी वह आपको याद कर रहे थे। बैठिए···बैठिए।

भट्टाचार्य : मुझे अब भी याद कर रहा था। ओ हो। मैंने चीठी लिखा था कि मैं अवश्य आपके दर्शन करने आऊँगा।

देवि माँ : बहुत बहुत धन्यवाद।

भट्टाचार्य : तुम्हारा दर्शन हो गया माँ।

देवि माँ : अब भी माँ! अब तो वैसा कोई डर नहीं!

भट्टाचार्य : हाँ, हाँ! किन्तु मै डरता हूँ। सब औरत लोगसे डरता हूँ। बात यह है न कि····।

देवि माँ : अच्छा, पहले बैठिए तो!

भट्टाचार्य : कहाँ बैठूँ! मेरे माफिक कोई जगह नहीं दीखता!

देवि माँ : आइए, इस कुर्सीपर बैठिए।

भट्टाचार्य : ओ कुर्सी उलट जायगा। [**आसनकी ओर बढ़ते हुए**] यह आसन अच्छा है [**बैठकर**] अहा हा। कितना उम्दा जगह है। देवि माँ, तुमी सुन्दर।····पहले आया था, तो यह जगह कैसा था गुरुकुल माफिक कमरा था। अब स्वर्ग माफिक हो गया। घरमें पूर्ण विवेक आ गया न!

देवि माँ : सब आपकी कृपा है दादा। सब स्नेह है आपका।

भट्टाचार्य : अब तो उस माफिक नहीं देखेगा न! याद है, कैसे देखा मुझे? अरे बाबा रे बाबा!

देवि माँ : [**हँसती हुई**] मुझे कुछ नहीं याद है दादा। पण्डितजी बताते थे कि मैंने आपको बहुत तंग किया था।

भट्टाचार्य : उसने केवल बताया होगा, दिखाया न होगा। [**सहसा खड़े होकर उसी मुद्राका अभिनय करते हुए**] कौन हो तुम? तुम्हारी तारीफ? [**हँस पड़ते हैं**] अरे बाबा रे बाबा। हम तो घरमें जाकर नींदमें डर गया!

देवि माँ : मुझे तो कुछ याद नहीं। हाँ, यह तो बताइए दादा आप बोल क्यों रहे हैं?

भट्टाचार्य : अब याद पड़ा ?

देवि माँ : अपने सुन्दररस पिया कि नहीं ?

भट्टाचार्य : हमने तो चुपकेसे सुन्दर रस चायमें मिलाकर पिया, पर उसने, मेरी गिन्नीने, नहीं पिया, मारने दौड़ी बाबा।

देवि माँ : फिर आप बोलने क्यों लगे ? ढाई महीने तक चुप रहना चाहिए आपको।

भट्टाचार्य : सुनो तो, सुनो। ढाई महीनेका 'मेडिकल लीव' लिया, घर आया। पत्नीको बताने गया कि, मैं मौन होने जा रहा हूँ। वह हमसे पहले ही मौन हो गई। किन्तु हमने उसका परवाह नहीं किया। कमरेमें आया सुन्दर रस पीकर चुप हो गया। उसने .गुस्सेमें आकर क्या किया कि, कमरेमें ताला डाल दिया। बाहरसे साक्षात् चण्डीके माफिक बोला, 'बोल अब भी सुन्दर होना माँगता है ? हमने परवाह नहीं किया। हम तो सो गया उसी बन्द कमरेमें। लेकिन स्वप्नमें हम बोल उठा, 'आमि जल खाबो।'

देवि माँ : फिर आप बोलने लगे। आप फिर चुप हो सकते थे। खैर, आप फिरसे सुन्दर रस पी लीजियेगा।

भट्टाचार्य : नहीं माँ नहीं। हमारे घरमें इस सुन्दर रसने महाभारत छेड़ दिया। [निकालते हुए) यह लीजिए उसकी .खुराकका सुन्दर रस। हम यही वापिस करने आया है।

देवि माँ : क्यों ? ऐसा क्यों दादा ?

भट्टाचार्य : बता दूँ ! उसीने तुमको पागल किया था देवि माँ, हाँ। पण्डितराज कहाँ गया ? हम अभी लौट जायगा···इसी दिल्ली एक्सप्रेससे। बहुत जल्दी है। कहाँ है पण्डित-

राज ? अरे तुम उदास हो गई देवि माँ, अब पण्डितराज का पारी आ गया क्या ?

देवि माँ : वह भीतर आराम कर रहे हैं दादा ।

भट्टाचार्य हाँ-हाँ, अब तो वह आराम करेगा ही, खूब करेगा ।

देवि माँ : आज हमें इस समय कलक्टर साहबके बँगलेपर जाना था—विशेष रूपसे हम लोग आमन्त्रित थे वहाँ । यह बीच रास्तेसे भाग आये ।

भट्टाचार्य : हम समझा, कलक्टरसे डर गया, डर गया कलक्टरसे ।

देवि माँ : बेहद नाराज़ हैं । नये कपड़े पहिनवाये थे, पैंट-कोट वग़ैरह ।

भट्टाचार्य : पैंट कोट और पण्डितराज । [**हँसते हैं**] लेकिन ठीक तो है, जैसा रहिन सहन, वैसा कपड़ा । जब ड्राइंगरूम है, तो पेंट कोट तो पहिनना ही पड़ेगा ।

देवि माँ : क्रोधमें आकर यहाँ तक कह दिया, मैं अब सुन्दर रसका व्यापार नहीं करना चाहता, मैं इसका निर्माता और नियामक नहीं ।

भट्टाचार्य : ऐसा माफिक कह दिया ।

देवि माँ : सोचिए दादा, कलक्टर साहबसे न मिलकर इन्होंने कितना अभूल्य अवसर खो दिया ।

भट्टाचार्य : बुलाओ पण्डितराजको, [**स्वयं पुकारते हैं**] ओ ब्रह्मचारी····खोखा आया है, खोखा । 'जगत्पते रामभद्र । नियोजय यथाधर्मं, प्रियां त्वं धर्मचारिणीम् ।'

देवि माँ : कृपाकर सुन्दर रस वापिस करनेकी बात न कहियेगा ।

भट्टाचार्य : [**अपने ही भावमें**] उत्तर रामचरितके अन्तिम अंकमें अरुन्धतीके मुखसे भवभूतिने कहा था ।

[**भट्टाचार्यके हाथसे सुन्दर रसकी शीशी ले लेती है ।**]

देवि माँ : इन्हें समझाइए दादा कैसे इन्होंने मुँहसे निकाल दिया कि यह सुन्दर रसका व्यापार नहीं करेंगे। मैं इसका निर्माता नहीं हूँ। कोई सुन लेता तो क्या होता? नई गृहस्थी है अभी। कितना खर्च है। नये सिरेसे सब चीज़ें खरीदनी हैं। कपड़े, फर्नीचर, रेडियो, पंखे, घर-गृहस्थीके सारे सामान, आना-जाना, उपहार-भेंट, दावत वग़ैरह। सोचिए, रुपयोंकी कितनी आवश्यकता है हमें।

भट्टाचार्य : देवि माँ, जरा मद्धिम बोलो, पण्डितराज घबड़ा जायगा। मैं अब सब समझ गया।

देवि माँ : कितने रुपयोंकी ज़रूरत है हमें। हम जितने ही सुन्दर ढंगसे रहेंगे, सुन्दर रसकी उतनी ही विज्ञप्ति होगी। लोग उतना ही सुन्दर रसपर विश्वास करेंगे, और इसकी लोकप्रियता बढ़ती जायगी। [रुककर] सुन्दरताके लिए अच्छे ढंगसे रहना कितना आवश्यकहै। [रुककर] इसके अतिरिक्त जीवन-यापनके लिए हमारे पास साधन ही क्या है? ईश्वरकी कृपासे सुन्दर रसका नाम होता चल रहा है। इसके व्यापारका मै अच्छे ढंगसे संगठन करना चाहती हूँ। इसके लिए एक सुन्दर-सा दफ्तर, एक शो-रूम, हर शहरमें इसका विज्ञापन और एजेन्सी। फिर देखिए कितना उज्ज्वल भविष्य है इसका। सोचिए दादा, कौन सुन्दर नहीं होना चाहता। सुन्दर रस कितना महान् आविष्कार है। इसका प्रथम प्रयोग मुझ पर हुआ है। मुझे देखिए। और मेरा यह चित्र।

भट्टाचार्य : [घबड़ाकर] माँ। ऐसे न बोलो माँ। पण्डितराज···।

देवि माँ : जो सत्य है, उसे कहनेमें क्या संकोच।

[भीतरसे आवेशमें पण्डितराजका प्रवेश]

पण्डितराज : चुप रहो देवि, चुप रहो ! [दुःखसे] देखो भट्टाचार्य, इस सुन्दर रसने मेरी देविको विज्ञापनके स्तरपर उतार दिया ।

भट्टाचार्य : [चुप हैं ।]

देवि माँ : इन्हें कृपाकर समझाइए दादा ।

पण्डितराज : कुछ जलपान कराया कि···।

भट्टाचार्य : जलपान हो गया पण्डितराज, बहुत खाई हो गया ।

देवि माँ : अरे मैं तो भूल ही गई । क्षमा कीजिए दादा ।

[तेज़ीसे अन्दर चली जाती हैं]

भट्टाचार्य : क्षमा न करेगा तो जायगा कहाँ, क्यों पण्डितराज ? अब तो खूब प्रसन्न हो न ! स्त्रीके पूर्ण स्वस्थ होनेका आनन्द अब तो मिल रहा होगा ?

पण्डितराज : व्यंग न करो बन्धु ! सहानुभूतिसे देखो । मुझे कोई रास्ता बताओ । मैं इस असत्यसे अब मुक्ति चाहता हूँ ।

भट्टाचार्य : असत्य, क्या असत्य बाबा ?

पण्डितराज : यही ! [ड्राइङ्गरूमका सङ्केत कर] मेरी देवि सुन्दरका अर्थ····यह सब बाह्य प्रसाधन बताती हैं । मुझे अजीब अर्थ सङ्कटमें डाल दिया ! सुन्दरके नामपर हमारा आमूल परिवर्तन ! संस्कार और परम्परासे विछिन्न ! झूठा, थोथा प्रदर्शन आत्म-विज्ञापन, ईर्ष्या और अहंकार—ये जड़ पर्दे, ये कुर्सियाँ, भड़कीले कपड़े, असत् भाव, रुपये···· रुपये, खर्च····खर्च !

[सुमिरनका प्रवेश]

सुमिरन : महाराजजी, जलपान तैयार है, अन्दर बुला रही हैं माँ जी !

भट्टाचार्य : अरे बाबा यहीं लाओ न !

पण्डितराज : नहीं बन्धु।····यहाँ नहीं, यह केवल बैठनेका कमरा है।

भट्टाचार्य : सोनेके लिए यह नहीं है ? फिर इतना अच्छा आसन···?

पण्डितराज : केवल सजावटके लिए।

भट्टाचार्य : और जो पुस्तकें लगी हैं यहाँ ? यहाँ पढ़ना भी····नहीं···?

पण्डितराज : नहीं केवल शोभाके लिए।

भट्टाचार्य : अरे तुम अपने शिष्योंको अब कहाँ पढ़ाते हो ?

पण्डितराज : कहीं नहीं, आज सवा महीने हो गये, उनका कहीं कुछ पता नहीं।

सुमिरन : आइए अन्दर आइए जी, देर हो रही है।

भट्टाचार्य : [उठते हुए] आओ उठो पण्डितराज, जलपानके लिए आओ।

पण्डितराज : बन्धु, मेरे जलपानका समय चार बजे निश्चित है। असमय खाने-पीनेसे मनुष्य मोटा हो जाता है, इसलिए सब वर्जित है। जाओ तुम।

भट्टाचार्य : मेरे संग तो चलो। मुझे अकेले डर लगेगा पण्डितराज।

पण्डितराज : अच्छा ··अच्छा।

[पण्डितराजके संग भट्टाचार्य और सुमिरन भीतर जाते हैं, कुछ ही क्षणों बाद दरवाज़ेके पर्देको हटाकर शक्तिदेव और जैनाथका प्रवेश। दोनों आधुनिक फैशनके पहनावेमें हैं। पूर्णतः नये अन्दाज और परिवर्तित मुद्रामें। आते ही इधर-उधर दृष्टि डालकर, आपसमें हाथके संकेतोंसे कुछ निर्णय करते हैं। मुँहसे न बोल सकनेकी विवशताके कारण दोनों हाथसे ताली बजाते हैं। भीतरसे सुमिरन आता है। देखते ही वह पहले तो घबड़ाता है, फिर उन्हें पहचानने लगता है।

दोनों शिष्य उससे संकेत करते हैं कि सुन्दर रस पीनेके कारण वे बोल नहीं सकते।]

सुमिरन : कैसे आये हैं आप बाबू लोग ?

शक्तिदेव : [एक चिट्ठी दिखाता है।]

सुमिरन : बुलाऊँ गुरु महाराजजीको ? अन्दर हैं।

जैनाथ : [एक पत्र यह भी दिखाता है। और हाथसे मना करता है कि गुरुजीको न बुलाये।]

सुमिरन : बैठिए आप लोग।

शक्तिदेव : कूँ···कूँ···कूँ···कूँ [हाथसे एक स्त्रीका संकेत]।

जैनाथ : कूँ···कूँ···कूँ [काग़ज़पर झट लिखता है।]

सुमिरन : सुमिरन [काग़ज़पर नाम पढ़कर] बीनाजी। बीनाजी तो चली गयीं।

[दोनों शिष्य परस्पर दुःखसे देखते हैं।]

सुमिरन : बैठिए आप लोग।

[दोनों आपसमें निर्णयकर माँजीको बुलानेके लिए सिर हिलाते हैं।]

सुमिरन : अच्छा बैठिए, मैं माँजीको बुला लाता हूँ।

[सुमिरन अन्दर जाता है। दोनों शिष्य पाकेटसे दर्पण निकालकर अपनी मोहिनी छविको निरखने लगते हैं। भीतरसे देवि माँका प्रवेश। दोनों नये ढंगसे प्रणाम करते हैं। देवि माँ उन्हें पहचानकर प्रसन्न होती हैं।]

सुमिरन : सुन्दर रस पीया है इन लोगोंने।

देवि माँ : हाँ, तभी देखो न। कैसे अच्छे लगने लगे।

[दोनों सगर्व परस्पर देखते हैं।]

देवि माँ : आओ बैठो। बैठो न! खड़े क्यों हो?

[शक्तिदेव जैनाथको संकेत करता है, और जैनाथ शक्तिदेवको। दोनों अपनी-अपनी चिट्ठियोंको आँखसे लगाते हैं, हृदयसे लगाते हैं।]

देवि माँ : कैसी चिट्ठी है यह?

[दोनों अपनी-अपनी चिट्ठियाँ देवि माँको दे देते हैं। देवि माँ चिट्ठीको खोलने चलती हैं कि दोनों संकेतसे न पढ़नेके लिए मना करते हैं। देवि माँ चिट्ठियोंको मेज़पर रखकर।]

देवि माँ : बैठो। खड़े क्यों हो?

सुमिरन : माँ जी, ये लोग शर्मा रहे हैं।

[उसी समय भीतरसे भट्टाचार्यके संग पण्डितराजका प्रवेश। दोनों शिष्य गुरुजीको नये ढंगसे प्रणाम करते हैं। भट्टाचार्य बैठ जाते हैं।]

पण्डितराज : कौन? कौन हो तुम लोग?

देवि माँ : आप इन्हें नहीं पहचानते? यह हैं आपके प्रिय शिष्य शक्तिदेव, जैनाथ।

पण्डितराज : असम्भव। ये कौन हैं? क्या हुआ इन्हें?

सुमिरन : महाराजजी, इन लोगोंने सुन्दर रस पीया है।

पण्डितराज : सुन्दररस। सुन्दर रस पीया है? कहाँ मिला इन्हें सुन्दर रस? किसने पिलाया?

देवि माँ : मैंने?

पण्डितराज : मैंने! मैंने! तुम्हारा यह अति अहंकार अब मुझे पागल बनायेगा। [शिष्योंकी ओर बढ़ते हुए] दूर हो जाओ तुम लोग मेरी आँखोंके सामनेसे। म्लेच्छ कहींके!

गुरुकुल और संस्कृतके विद्यार्थी, और ये वस्त्रविन्यास। यह सूट बूट। मुखमें पान, आँखोंमें काजल। स्त्रियोंकी तरह सँवारे हुए ये केश। हट जाओ यहाँसे। भाग जाओ।

[सुमिरन डरके मारे भीतर भाग गया है। दोनों शिष्य सभय दरवाज़ेपर जा खड़े होते हैं।]

देवि माँ : क्यों हस तरह चीख रहे हो? यह कौन-सा तरीक़ा है?

पण्डितराज : नहीं हटोगे तुम लोग यहाँसे?

शक्तिदेव : [सहसा मुँह थामे हुए] क्षमा···क्षमा गुरुजी।

[और सचेत होकर पुनः अपना मुँह दबोच लेता है, जैनाथ उसे सँभालता है और दोनों गलीमें भागते हैं।]

देवि माँ : इतना क्रोध आपको शोभा नहीं देता।

पण्डितराज : हाँ, क्रोध केवल स्त्रियोंको ही शोभा देता है। जो सुन्दर है उसे···।

देवि माँ : इतना व्यंग्य करने लगे आप? वे आपके शिष्य थे···। सुन्दर रसकी उनकी कामना थी। सुन्दर रसका उनपर इतना प्रभाव पड़ा है। इसमें इतने क्रोधकी क्या बात? इससे तो सुन्दर रसका विज्ञापन ही हो रहा है।

पण्डितराज : चुप रहो देवि, मर्यादामें रहकर बोला करो?

देवि माँ : अच्छे आधुनिक कपड़े पहिनना, सफ़ाई और सलीकेसे रहना आपकी दृष्टिमें बुरा है। जीवन भर गुरुकुल और आश्रममें रहे···तभी आपको यह सब असह्य है!

पण्डितराज : शान्त हो जाओ देवि शान्त हो जाओ! सामने पूज्य अतिथि खड़ा है—विचारमें रहो!

देवि माँ : ठीक है, देख रही हूँ आपका विचार !

[देवि माँ आवेशमें भीतर चली जाती हैं]

भट्टाचार्य : सुमिरन एक गिलास शीतल जल लाओ ! ओ माँ ? यह सब क्या हो रहा है ? यह सब क्या है बाबा ?

पण्डितराज : यह सब मेरे सुन्दर रसका कुप्रभाव है भट्टाचार्य। [दुःखपूर्ण ढंगसे] मैं तुमको क्या बताऊँ बन्धु ? बहुत ग्लानि है मुझको ? मुझसे कुछ कहा नहीं जा रहा है।

[सुमिरन एक गिलास जल भट्टाचार्यजीको पिला जाता है।]

भट्टाचार्य : ओ बाबा, अगर मेरी पत्नी सुन्दर रस पी लेती···ईश्वर सब अच्छा ही करता है।

पण्डितराज : अच्छा तो करता है पर वह उस मनुष्यको उलझा अवश्य देता है, जो अनुचित साधनोंका प्रयोग करता है। [रुककर सोचते हुए] अपने आचार्य गुरु स्वामी महाराजके दर्शन दूसरी बार जब मैंने मथुरामें किये—जब देवि माँ पूर्ण स्वस्थ हो चुकी थीं। मै पन्द्रह दिनो तक उनके साथ रहा। [देवि माँ सुइटर बुनती हुई आती हैं, और अपने गम्भीर भावमें गुमसुम कुर्सीपर बैठ जाती हैं।] सच भट्टाचार्य, अपने स्वामी गुरुजीके पाससे मेरी कहीं हटनेकी इच्छा नहीं हो रही थी। गुरुजीने पूछा, तुम्हारा यह सुन्दर रस क्या है ? मैंने उत्तर दिया, गुरुजी मैंने आपकी कृपासे यह एक ओषधि बनाई है, इससे जो धन प्राप्त होता है, वह सब अपनी देविके स्वास्थ्य पर व्यय करता हूँ।

भट्टाचार्य : फिर वही गुरुकुल वाला दोष।···सवाल कुछ, जवाब कुछ। गुरुजीने पूछा, सुन्दर रस क्या है ? तुमने उत्तर

दिया, उससे जो धन प्राप्त होता है, उससे देवि माँकी ओषधि करता हूँ। यही मतलब न तुम्हारा ?

पण्डितराज : सुन्दर रस क्या है, इसका स्पष्ट उत्तर मुझे अपने गुरु महाराजको अवश्य देना था—मैंने बता दिया भट्टाचार्य, इस सुन्दर रससे वस्तुतः कोई सुन्दर नहीं होता, इसके विधिवत् सेवनसे हृदय एवं मस्तिष्कपर ऐसा प्रभाव अवश्य पड़ता है, कि पीने वाला अपने आपको सुन्दर समझने लगता है।

[देवि माँके हाथसे सुइटरका सामान छूट जाता है। भट्टाचार्य आश्चर्य चकित पण्डितराजको देखते हैं।]

देवि माँ : [जैसे सहसा चीख़ पड़ती हैं] भट्टाचार्य ! भट्टाचार्य दादा !

भट्टाचार्य : पण्डितराज ! पण्डितराज !

पण्डितराज : सत्य है यह ! मैं अपने गुरु महाराजसे असत्य नहीं बोल सकता ! इतने वर्ष, बहुत हो गये ! मेरा व्यक्तित्व मेरा है ! मै महान् हूँ ! मनुष्य हूँ, चमत्कार नहीं हूँ।

[देवि माँ दौड़कर गलीके दरवाज़े जा खड़ी होती हैं।]

देवि माँ : हे ईश्वर ! अच्छा हुआ, यहाँ सुननेवाला कोई नहीं था।

पण्डितराज : इसपर आचार्य स्वामीजीने कहा, 'पण्डितराज, यह अच्छा नहीं किया तुमने' मैंने स्वीकार किया। फिर वह गम्भीरतासे बोले, 'देविकी अस्वस्थताके मूलमें इसी सुन्दर रसका विकार था, और कुछ नहीं।'

भट्टाचार्य : तो तुमने देवि माँको सुन्दर रससे इतना सुन्दर नहीं किया ?

पण्डितराज : नहीं भट्टाचार्य। सुन्दर रसने देविको विकार दिया है। **[भरे कण्ठसे]** भट्टाचार्य, अब सुन्दर रससे मुझे मुक्ति दो।

देवि, मुझे मुक्ति दो इससे। अब तुम स्वस्थ हो! तुम विवेकपूर्ण हो देवि!

देवि माँ : [सहसा] नहीं नहीं, यह सब हृदयकी दुर्बलता है। कर्मसे भागनेका यह सरल उपाय है।

[भीतर जाने लगती है, पण्डितराज देविको रोकते हैं।]

पण्डितराज : सुनो सुनो देवि, मेरी बात सुनो।

[देवि माँ अन्दर चली जाती हैं।]

बोलो भट्टाचार्य, ···भट्टाचार्य, बन्धु।

भट्टाचार्य : मुझे घबड़ाओ नहीं बाबा। मैं अब सब समझ गया, किन्तु मेरी गिन्नी मुझसे पहले ही कैसे समझ गई।

पण्डितराज : मेरी देविको भी तुम समझा दो भट्टाचार्य, यह एक उपकार तुम और कर दो। आजीवन आभारी रहूँगा मैं।

भट्टाचार्य : घबड़ाओ नहीं पण्डितराज। मुझे पूरा विश्वास है, सब ठीक हो जायेगा। जब तुम ठीक हो गये तो समझो सब ठीक हो जायेगा [हँसते हुए] ओ बाबा, तुम इतना खतरनाक है।

पण्डितराज : मुझे क्षमा करो भट्टाचार्य। मैं असत्य नहीं हो सकता। मैं मुक्त हूँ अब?

भट्टाचार्य : तुम मुक्त है अब। जिसमें सत्य कहनेका साहस, और कर्म करनेका हिम्मत है, वही तो मुक्त है। सत्य है, सुन्दर हैं बाबा। तुमने हमको 'कनफ्यूज' कर दिया था। अब हम जायेगा पण्डितराज। 'सुन्दर रस' वापिस करने आया था।

पण्डितराज : मेरी देविका क्या होगा भट्टाचार्य? क्या हमारे गुरुजी महाराज यहाँ पधार नहीं सकते?

भट्टाचार्य : 'पधार क्यों नहीं सकते, पर देवि माँके गुरु तो तुम स्वयं हो। घबडाओ नहीं सब ठीक हो जायेगा। ज़रा तुम देवि माँको बुलाओ मैं उसको प्रणाम करके अब जाऊँगा। [**पण्डितराज भीतर जाते हैं।**] जल्दी भेजो माँको! और तब तक तुम जलखाई कर लो—चार बज गया न! [**पण्डितराज भीतर जाते हैं। भट्टाचार्य हँसते हुए खड़े रह जाते हैं।**]

भट्टाचार्य : कितना सीधा है मेरा पण्डितराज! देवि माँने उसे चक्कर-में डाल दिया। सुन्दर स्त्री 'आलवेज़' खतरनाक होता है। [**देवि माँका प्रवेश। उन्हें देखते ही भट्टाचार्य सभय मुँह बन्द कर लेते हैं।**]

भट्टाचार्य : देवि माँ, अब मैं जा रहा हूँ। एक बात कह रहा हूँ, सावधान रहना।

देवि माँ : क्या? क्या दादा?

भट्टाचार्य : अब पण्डितराजका मस्तिष्क किञ्चित्···। किञ्चित् हो··· गया। समझी ···समझी न!

देवि माँ : [**सभय**] मस्तिष्क विकार।

भट्टाचार्य : हाँ, किञ्चित्···।

देवि माँ : किञ्चित् मस्तिष्क विकार! नहीं, नहीं····नहीं दादा। ऐसा मत कहिए। नहीं नहीं।

भट्टाचार्य : देखा नहीं, शिष्योंको देखकर और सुन्दर रसका नाम सुनते ही कितना पागल माफ़िक बोलने लगा। चीखने-चिल्लाने लगा। यही 'सिमतम' यानी लक्षण तुम्हारा भी था। मैं स्पष्ट बात कह दे रहा हूँ। तुम जानो बाबा, हाँ।

[**पण्डितराज आते हुए दिखायी देते हैं।**]

भट्टाचार्य : वह आ रहा है। देखो, कैसा माफ़िक देख रहा है वह।

[पण्डितराजका प्रवेश। देवि माँ दुःख और भयसे पण्डितराजको देखती हैं, पण्डितराज आसनपर बैठ गये हैं। भट्टाचार्य भी पण्डितराजको घबड़ाई हुई दृष्टिसे देख रहे हैं। पण्डितराजने मेज़पर पड़े हुए दोनों पत्रोंको उठा लिया है।]

देवि माँ : [घबड़ायी हुई भट्टाचार्यके समीप] अब क्या होगा दादा?

भट्टाचार्य : तुमी जानो माँ। तुमीं जानो। सावधान। वह कैसा पत्र है, किसका पत्र है, कितने ग़ुस्सेसे पढ़ रहा है। देखो देखो।

[पण्डितराज खुले हुए पत्रोंको दिखाते हुए]

पण्डितराज : देवि, ये किसके पत्र हैं? क्या है यह? पढ़ा तुमने?

देवि माँ : नहीं, नहीं महाराज। आपके उन दो शिष्योंके ये पत्र हैं। मैंने अभी नहीं पढ़ा!

पण्डितराज : साहस हो तो पढ़ो इन भयानक अशुभ पत्रोंको।

[भट्टाचार्य और देवि दोनों अपने-अपने भावोंके अनुकूल पण्डितराजको देखते रह जाते हैं। देवि माँ स्तम्भित हैं।]

पण्डितराज : ये शिष्योंके प्रेमपत्र हैं—तुम्हारी बहन बीनाके नाम। यह है सुन्दर रसका प्रभाव। तुमने मुझसे छिपाकर उन्हें सुन्दर रस पिलाया। उन्हें अमृत समझकर विष दे दिया तुमने। लो···लो हृदयपर पत्थर रखकर पढ़ लो इन पत्रोंको, नहीं तो विश्वास कैसे होगा तुम्हें। लो पढ़ो।

[पत्रोंको देविके सामने फेंक देते हैं। और भट्टाचार्यके समीप जाते हैं।]

पण्डितराज : आओ, तुम्हें विदा कर दूँ भट्टाचार्य। नहीं तो तुम्हें न जाने क्या-क्या देखना पड़ जाय।

भट्टाचार्य : क्यों देवि माँ, अब मुझे आज्ञा है न ?

[देवि माँ संत्रस्त खड़ी हैं। भट्टाचार्य जानेके लिए पुनः एक बार आज्ञा माँगते हैं। सहसा द्रवित होकर देवि माँ भट्टाचार्य के चरणस्पर्श करनेके लिए बढ़ती हैं।]

भट्टाचार्य : नहीं-नहीं, नहीं माँ। ऐसा नहीं हो सकता। चरण-स्पर्श तो हम करेगा। देवि माँ है न। देवि और माँ। पण्डितराज, तुम्हारी ही उल्टी-सीधी ओषधि-प्रयोगसे देवि माँका मस्तिष्क-विकार हुआ था।

पण्डितराज : मुझे स्वीकार है बन्धु।

[देवि माँ पण्डितराजको देखती रह जाती हैं।]

पण्डितराज : देवि, तुम मुझे ऐसे न देखो।

भट्टाचार्य : हम चला जाता है, तब तुम दोनों खूब इतमीनानसे एक दूसरेको देखो।

[पण्डितराजके संग जाते-जाते सहसा घूमकर]

अब तुम पण्डितराजकी ओषधि करो। इसका किञ्चित्····।

[दोनोंका प्रस्थान देवि माँ अकेली दृश्यमें रह जाती है। फ़र्शपर गिरे हुए पत्रोंको उठाती हैं। उन्हें पढ़ते ही वह भयाकुल हो उठती हैं। और निश्चय भावसे पत्रोंको फाड़ती हुई।]

देवि माँ : सुन्दर रसका इतना विकार। चरित्रका इतना पतन। वास्तवमें यह रस किसीको सुन्दर नहीं बनाता। सुन्दरसे तात्पर्य, कर्म और चरित्रसे सुन्दर। भावना और अन्तः-करणसे सुन्दर।

[पृष्ठभूमिमें काग़ज़-बोतल वालेका स्वर उभरता है।]

स्वर : काग़ज़-बोतल वाला। बोतल-काग़ज़ वाला।

[देवि माँ पत्रके टुकड़ोंको फ़र्शपर बिखेरकर रेकपर रखी हुई गुड़ियाको स्नेहसे उठाती हैं ।]

देवि माँ : [सहसा] कौन ? बोतल वाले । [दरवाज़ेकी ओर बढ़कर] बोतल वाले । इधर आओ । [लौटती हुई] सुमिरन···सुमिरन ।

[सुमिरनका प्रवेश]

सुमिरन : क्या है माँ जी ?···नहीं····नहीं···बहूजी ।

देवि माँ : तुम मुझे माँजी ही कहो ।

सुमिरन : अच्छा माँजी ।

[दरवाज़ेपर काग़ज़-बोतलवाला प्रविष्ट होता है ।]

देवि माँ : सुमिरन । सुन्दर रसके सारे बोतल उठा लाओ ।

सुमिरन : सारे बोतल ।

देवि म : हाँ, हाँ, सारे बोतल । [स्वयं भीतर जाती हुई] आज सारे बोतल बेंच डालो !

[भीतरसे स्वयं कई बोतल लिये हुए, और पीछे सुमिरन बोतल लिये हुए आता है ।]

देवि माँ : लो गिन लो सारे बोतल ।

[बोतलवाला बोतल गिनने लगता है । सुमिरन आँख बचाकर सुन्दर रस पीने लगता है ।]

देवि माँ : [डाँटती हुई] सुमिरन ! यह क्या कर रहे हो ?

सुमिरन : माँ जी, थोड़ा-सा ही सुन्दर रस । मैंने कभी नहीं पिया ।

देवि माँ : खबरदार ! फेंको उसे । [बोतलवालेसे] जल्दी करो । रखो सारे बोतल ।

बोतलवाला : एक बोतलका दाम दो आना होगा माँजी ।

देवि माँ : हाँ, हाँ, ठीक है। जल्दी करो।

सुमिरन : पागल है बोतलवाला। कमसे-कम एक बोतलके दो रुपये। पता भी है, सुन्दर रसके बोतल हैं यह।

बोतलवाला : हाँ माँजी।

[झट एक बोतल उठाकर अपने मुँहपर लगाना चाहता है।]

देवि माँ : यह क्या कर रहे हो? खबरदार जो इसे ओठोंसे लगाया। ज़हरीली दवाके ये बोतल है समझे।

[बोतलवाला सारे बोतल समेटता है। दरवाज़ेपर पण्डितराज मुदित मन खड़े हैं।]

पण्डितराज : सुन्दर। सुन्दर देवि।

[हँसते हुए आते हैं। बोतलवाला बाहर जाता है।]

सुमिरन : महाराजजी! सारा सुन्दर रस अब क्या होगा?

पण्डितराज : अच्छा····अच्छा! देखता हूँ, कहीं कोई बोतल रह तो नहीं गया।

[मुदित मन भीतर जाते हैं। पीछे-पीछे सुमिरन दौड़ता है। गलीमें बाजावाला आवाज़ देता है।]

बाजावाला : [बाहरसे ही] माँजी! आप यह जगह छोड़कर कहीं चली जा रही हैं क्या? माँजी, हम तो शोर भी नहीं मचाते।

देवि माँ : [बढ़कर] नहीं नहीं। हम कहीं नहीं जा रहे हैं। हम तुम्हीं लोगोंके बीचमें रहेंगे।

बाजावाला : तब आज एक बाजा ले लीजिए माँजी]

[माँजी उसके हाथसे एक बाजा ले लेती हैं। और

प्रसन्नतासे उसे बजाती हुई बढ़ती हैं। भीतरसे पण्डित-राज शंख फूँकते हुए आते हैं। सुमिरन पीछे खड़ा हँस रहा है।

सहसा उसी क्षण मुँह बन्द किये हुए केदार बाबू वकील साहब दौड़े आते हैं। और एक हाथसे मुँह थामे हुए आश्चर्यचकित खड़े रह जाते हैं।]

सुमिरन : [पास आकर] अब बोल दीजिए। मुँह खोलिए साहब। अब आप सुन्दर हो गये। देखिए न।

केदार : [झट पाकेटसे आइना निकाल कर उसमें देखते हुए] क्यों पण्डितराज ? अरे, मैं तो वैसाका वैसा हूँ। मैं तुमपर अब मुक़दमा चलाने जा रहा हूँ। क्या समझ रखा है तुमने···मैं·····।

[देवि माँ रास्ता रोककर खड़ी हो जाती हैं। केदार बाबू मुँह देखते हुए खड़े रह जाते हैं। एक ओर पण्डितराजका शंख, दूसरी ओर मुदित मन देवि माँ।]

पर्दा

भारतीय ज्ञानपीठ काशी

उद्देश्य

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन तथा लोकहितकारी
मौलिक साहित्यका निर्माण